# एक बार फिर: कुरिन्थुस में सिर, ओढ़नी और बाल[1]

Hans-Jörg Ronsdorf · जनवरी 2021 · अक्टूबर 2026 में संशोधित

हर साल फिर से, पर पहले से कम, पौलुस के इस वचन-भाग (1 कुरिन्थियों 11:2-16) पर लेख छपते हैं, जो सब जानते हैं कि आसान नहीं है। मैं इस पर क्यों लिख रहा हूँ? नवंबर 2020 में प्रकाशित मेरी पुस्तक "स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!" ("Frauen, vergebt uns!") में, जो पुरुष और स्त्री की भूमिका के बारे में है[2], मैंने एक अध्याय में इस वचन-भाग पर विचार किया था। पर उतने व्यवस्थित और विस्तार से नहीं, जितना मुझे बाद में उचित लगा। क्योंकि पुस्तक में मैंने उद्धरण-सिद्धांत को बहुत ज़ोर से प्रस्तुत किया था, जैसा कि Thomas Schirrmacher ने अपनी पुस्तक "Paulus im Kampf gegen den Schleier!" (जर्मन में) में विकसित किया है। मैंने यह ध्यान दिलाया था कि उद्धरण-सिद्धांत भी एक धारणा ही है, जो काफ़ी विश्वसनीय तो है, पर अंततः सिद्ध नहीं हुई। इस अध्ययन में मैं एक धर्मविज्ञानी महिला और एक धर्मविज्ञानी पुरुष के कार्यों की सहायता से उद्धरण-सिद्धांत के बिना भी विश्वसनीय व्याख्याओं तक पहुँचता हूँ।

यह वचन-भाग एक ऐसी सांस्कृतिक स्थिति में बोलता है जो हमारे लिए पराई है, अर्थात् पहली शताब्दी की यूनानी-रोमी संस्कृति में। किसी भी जगह नहीं, बल्कि कुरिन्थुस में, जो उस समय यूनान में एक रोमी उपनिवेश था। पौलुस के लिए यह अनजानी जगह नहीं थी; वहाँ उसने 18 महीने काम किया। वह इस नगर की हर बारीकी जानता था (प्रेरितों के काम 18:1-18)।

इस अध्ययन में मैं अक्सर दो अपेक्षाकृत नई पुस्तकों से उद्धरण दूँगा। वे इस कठिन वचन-भाग को बेहतर, नए ढंग से या अधिक गहराई से समझने में सहायता करती हैं। विशेष रूप से पद-दर-पद विचार में मैं उसे उनसे बेहतर शब्दों में नहीं कह सका, और इसलिए अधिकतर इन दोनों लेखकों को ही बोलने देता हूँ। एक है Eckhard J. Schnabel (एकहार्ड जे. श्नाबेल) की (विशाल और उत्कृष्ट) टीका "Der erste Brief des Paulus an die Korinther" (जर्मन में; श्रृंखला Historisch-Theologische Auslegung) (वे एक रूढ़िवादी, "बाइबल-निष्ठ", सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) धर्मविज्ञानी और प्रोफ़ेसर हैं[3])। मैं कोई दूसरी टीका नहीं जानता जो इतनी ठोस नींव पर और इतने सारे स्रोत-संदर्भों के साथ इस वचन-भाग की गहराई से छानबीन करती हो। मैं उनके सभी निष्कर्षों से सहमत नहीं हूँ, पर इस विषय में इसकी अपेक्षा हमेशा करनी ही चाहिए। दूसरी पुस्तक का नाम है "Paul and Gender"[4]। Cynthia Long Westfall (सिंथिया लॉन्ग वेस्टफ़ॉल; इतिहासकार और धर्मविज्ञानी) ने 2016 में इस वचन-भाग पर और लिंग-प्रश्न से जुड़े पौलुस के अन्य सभी महत्वपूर्ण वचन-भागों पर एक अध्ययन प्रस्तुत किया, जिस पर अंग्रेज़ी-भाषी जगत में व्यापक ध्यान दिया गया। सांस्कृतिक स्थिति को गहराई से ध्यान में रखते हुए वे उन बड़े प्रश्नों पर नया प्रकाश डालती हैं, जिनसे अनगिनत व्याख्याकार और साधारण बाइबल-पाठक भी जूझते हैं। दोनों लेखक बहुत-सी बातों में सहमत हैं। (Westfall के उद्धरणों के लिए फ़ुटनोट में केवल पृष्ठ-संख्या दी गई है।)

मेरा लक्ष्य (अपने लिए) यह स्पष्ट करना है कि पौलुस का तर्क क्या है और किस बात ने उसे ठीक इसी तरह लिखने के लिए प्रेरित किया। **क्या समस्या स्त्रियाँ थीं या पुरुष? और यदि अंत में यह बिलकुल स्पष्ट भी हो जाए – जिसकी यहाँ गारंटी नहीं दी जा सकती और जिसका निर्णय हर पाठक को स्वयं करना होगा – तब भी यह प्रश्न बचा रहेगा: 21वीं शताब्दी में हम इसके साथ क्या करें?**

यह बाइबल-निष्ठा का प्रश्न नहीं है, जैसा कि अक्सर अदूरदर्शिता और अति-उत्साह से कहा जाता है, बल्कि बाइबल को सही ढंग से समझने का प्रश्न है। यदि हम तथाकथित बाइबल-निष्ठा को सचमुच गंभीरता से लेते हैं, तो बाइबल-

अध्ययन का परिश्रम (बार-बार) करना और उसमें समय लगाना ही होगा। नहीं तो वह एक दिखावटी-धार्मिक, लगातार दोहराया जाने वाला खोखला शब्द बनकर रह जाती है। या फिर एक शिब्बोलेत, जिससे वहाँ सीमाएँ खींची जाती हैं जहाँ कोई सीमा नहीं होनी चाहिए, या वहाँ निष्ठा की दुहाई दी जाती है जहाँ सोच-विचार या संयम की ज़रूरत होती।

## संदर्भीकरण

संदर्भीकरण यह मानकर चलता है कि पहले पवित्रशास्त्र का अध्ययन उसके अपने परिवेश में किया जाए। उसके बाद ही वह यह जानने का प्रयास करता है कि यह वचन-भाग आज क्या कहता है। इसलिए बात सीधे आदेशों की कम है, जैसे प्रेम की आज्ञा या झूठ बोलने का निषेध। इन्हें कालातीत मानने में हमें कोई कठिनाई नहीं होती। बात तब अलग होती है जब प्रश्न बाहरी बातों का हो, या ऐसे रीति-रिवाजों और प्रथाओं का (मूर्तियों को बलि किया गया मांस आदि), जिन्हें हम आज नहीं जानते।

पौलुस स्पष्ट रूप से यूनानी कुरिन्थुस और पूरे रोमी साम्राज्य में उस समय के रीति-रिवाजों और प्रथाओं का उल्लेख करता है। उस समय की संस्कृति के इस संदर्भ से कोई भी व्याख्याकार, या बाइबल-पाठक भी, बच नहीं सकता। अधिकांश व्याख्याकारों के साथ ठीक यही होता भी है, यद्यपि ऐतिहासिक तथ्यों का ज्ञान और उनकी व्याख्याएँ कभी-कभी बहुत भिन्न होती हैं, और इससे वचन-व्याख्या की गुणवत्ता प्रभावित होती है। (उन सबके लिए जो मेरी तरह ब्रदरन आंदोलन से आते हैं: Darby (डार्बी) और Kelly (केली) ने भी ओढ़नी और बालों के विषय को केवल वचन-भाग के भीतर ही नहीं समझाया, बल्कि उस समय की संस्कृति का भी सहारा लिया। क्योंकि सिर ढकना एक सांस्कृतिक विषय है, बाइबल-आधारित धर्मविज्ञान का विषय नहीं।) पौलुस सांस्कृतिक रीति-रिवाजों को सृष्टि के वृत्तांत के प्रकाश में परखने और यहाँ तक कि उनका आधार बताने में सफल होता है, ताकि कुरिन्थियों के लिए सचमुच महत्वपूर्ण इस प्रश्न (या इन प्रश्नों) का उत्तर दे सके।

पौलुस अपने तर्क में कोई सर्वकालिक नियम स्थापित नहीं करता, कोई ऐसी आचार-संहिता नहीं जो सदियों के पार या सृष्टि के आरंभ से ही लागू हो और कालातीत हो। **पौलुस यह तर्क देता है कि सुसमाचार की स्वतंत्रता के बावजूद कैसे ऐसा व्यवहार किया जाए कि उसके समकालीनों में से किसी को ठोकर न लगे। तब भी, जब इससे मसीही स्वतंत्रता सीमित होती हो।** इसलिए नहीं कि यह धर्मविज्ञान की दृष्टि से अनिवार्य या प्रमाणित है, बल्कि इसलिए कि यह उस सुनहरे नियम के अनुसार है, जिसे वह ठीक इसी अध्याय के आरंभ होने से तुरंत पहले इस प्रकार कहता है:

**1 कुरिन्थियों 10:31-33: चाहे तुम खाओ या पीओ या जो कुछ भी करो, सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिए करो। न यहूदियों के लिए, न यूनानियों के लिए, और न परमेश्वर की कलीसिया के लिए ठोकर का कारण बनो; जैसे मैं भी सब बातों में सबको प्रसन्न रखता हूँ, और अपना नहीं, बल्कि बहुतों का लाभ ढूँढ़ता हूँ, ताकि वे उद्धार पाएँ।**

यह "सुनहरा नियम" ठीक बाद में आने वाले वचन-भाग की कुंजी है। क्योंकि जो नियम पौलुस तर्क के द्वारा कुरिन्थियों को समझाना चाहता है, वे "सब बातों में परमेश्वर की महिमा करना" और साथ ही अपने समकालीनों और साथी मनुष्यों के लिए ऐसी बाहरी बातों या व्यवहारों के कारण ठोकर न बनना – इन दोनों का मेल हैं, जो उस समय अनुचित या सांस्कृतिक (धर्मवैज्ञानिक नहीं) अर्थ में लज्जा की बात भी माने जाते थे। कुरिन्थुस के मसीही इन्हीं रीति-रिवाजों में पले-बढ़े थे, और यदि इस मार्ग से लोगों को मसीह के लिए जीता जा सकता था, तो उनका पालन

करना या उन्हें सहना कोई बहुत बड़ी क़ीमत नहीं थी। पौलुस यूनानी-रोमी संस्कृति की बाहरी बातों को अपना नहीं बना लेता, भले ही वह उनके पालन की सलाह देता है, बल्कि ऐसा मार्ग खोजने का प्रयास करता है जो अनेक पहलुओं को ध्यान में रखे। एक कठिन संतुलन, जो एक ओर पुरुष और स्त्री की सृष्टि की घटना पर विचार करता है और उसे गंभीरता से लेता है, और दूसरी ओर सामान्य लोगों (समाज) की भावना को पूरी तरह शामिल करता है।

यहाँ पहले से ही पद 10 की ओर एक संकेत, जहाँ पौलुस स्पष्ट कहता है (अधिकांश अनुवादों से भिन्न; इस पर आगे और), कि स्त्री का अपने सिर पर अधिकार है, अर्थात् उसे ढकने या न ढकने का। पर अपना निर्णय उसे ऊपर बताए गए मापदंड और उन अन्य पहलुओं को ध्यान में रखकर ही करना चाहिए, जिनकी चर्चा मैं आगे करूँगा।

## वचन-भाग का लागू होने का क्षेत्र

पौलुस की ये सिफ़ारिशें, जिनके लिए वह कुरिन्थियों को उनकी स्वतंत्रता के बावजूद राज़ी करना चाहता है, किस क्षेत्र पर लागू होती हैं?

**यह एक साथ इकट्ठा होना है!** प्रार्थना करना और भविष्यद्वाणी करना हर जगह और हर समय हो सकता है और होना भी चाहिए, पर कुरिन्थियों की पत्री में (विशेष रूप से अध्याय 14 देखिए) ये एक साथ इकट्ठा होने की मुख्य बातें हैं। पत्री के संदर्भ से ही यह स्पष्ट होना चाहिए कि किस स्थान और किस अवसर की बात सोची गई है।

जो लोग आराधना-सभाओं में स्त्रियों के लिए चुप रहने की आज्ञा का समर्थन करते हैं, वे पौलुस के इस कथन को कि स्त्रियाँ प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करती हैं, हर जगह पर लागू कर देते हैं, बस आराधना-सभा पर नहीं। यह विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि सिर ढकना सार्वजनिक दृष्टि के लिए होता है; उसे देखा जाना ज़रूरी है या देखा जा सकता है, नहीं तो उसका कोई अर्थ ही नहीं। इसके अतिरिक्त, अध्याय 12-14 में आत्मा के वरदान पूरी तरह और बिना किसी भी लिंग-आधारित प्रतिबंध के बाँटे जाते हैं, और – कई बार ज़ोर देकर – सभा में **सभी** भाग लेते हैं। इसलिए स्त्रियों के लिए चुप रहने की आज्ञा (1 कुरिन्थियों 14:34-35) इसके विरोध में नहीं हो सकती, बल्कि उसे अध्याय 11-14 के प्रकाश में और अंततः पूरी पत्री के संदर्भ में समझा जाना चाहिए। तब बात स्त्रियों के ऐसे बोलने की है जो उस घरेलू कलीसिया में, जहाँ मसीही इकट्ठा होते थे, विघ्न डालता है। संभवतः ऐसा बोलना जो आत्मिक आदान-प्रदान में बाधा डालता है या बीच में दख़ल देकर ध्यान भटकाता है, या पतियों के लिए लज्जा का कारण भी बनता है, जब उनकी पत्नियाँ सभा में उन्हें सबके सामने नीचा दिखाती हैं – आज की जर्मन भाषा में कहें तो उनकी "फ़ज़ीहत" करती हैं। जो भी हो, व्याख्या-शास्त्र के मूल नियमों का पालन करते हुए यह बोलने पर कोई सामान्य प्रतिबंध नहीं हो सकता। ऐसा तभी होता है जब इन पदों को अलग-थलग कर दिया जाए और ऐसे देखा जाए मानो वे पूरी तरह अपने आप में अकेले खड़े हों।

## क्या पौलुस स्त्रियों का शत्रु था?

**ऐतिहासिक-आलोचनात्मक चश्मे** से यह वचन-भाग कैसे देखा जाता है, यह इस उद्धरण से समझा जा सकता है: "इस वचन-भाग ने कलीसिया में और उससे प्रभावित समाजों में स्त्रियों के दमन में योगदान दिया है। यह किसी भी तरह – चाहे कितनी भी उदार व्याख्या की जाए – उसके अनुरूप नहीं है जो 21वीं शताब्दी में लिंग-संबंधों के विषय में मसीही-धर्मवैज्ञानिक रूप से कहा जाना चाहिए। लिंग-संबंधों में समानता और न्याय, तथा विषमलैंगिक

विचारधाराओं के साथ आलोचनात्मक व्यवहार पौलुस के लिए अनजाने थे। यह पूछना होगा कि ऐसा वचन-भाग किस अर्थ में अब भी प्रेरणादायक हो सकता है। या क्या आज के दृष्टिकोण से इस वचन-भाग को केवल अस्वीकार ही किया जा सकता है, क्योंकि इसने न्याय को हानि पहुँचाई है और यह एक ऐसे मनुष्य की भूल थी जिसने वास्तव में अपने समय में पृथ्वी पर न्याय के लिए काम किया था?"[5] यह मत इस वचन-भाग की उस व्यापक धारणा का प्रतिनिधित्व करता है, जिससे मैं किसी भी तरह सहमत नहीं हूँ। बाइबल के वचन के प्रति नकारात्मक-आलोचनात्मक दृष्टिकोण अनिवार्य रूप से इसी मत तक ले जाता है।

दूसरी ओर, **बाइबल-निष्ठ पक्ष** में इस प्रकार की आलोचना को ज़ोरदार ढंग से अस्वीकार किया जाता है और कहा जाता है: शुरू से ही परमेश्वर की योजना पदानुक्रमिक अधीनता है, न कि समानता या समान अधिकार। यह जेंडर-दर्शन के "युग-आत्मा" का विरोध करता है।

क्या हमें इन दोनों चरम दृष्टिकोणों में से एक को चुनना ही होगा? क्या इस वचन-भाग को समझाने का कोई दूसरा मार्ग है, बिना दोनों दृष्टिकोणों को आपस में मिलाए? वह मेरे लिए एक खोखला समझौता होता।

एक ऐसी पढ़ने की रीति है जो इन दोनों में से किसी भी व्याख्या के आगे नहीं झुकती, बल्कि पौलुस को, उसकी 13 पत्रियों को और प्रेरितों के काम को, और निस्संदेह यीशु को आधार बनाती है, जिसे पौलुस ने अपना आदर्श माना: **"तुम मेरी सी चाल चलो, जैसा मैं मसीह की सी चाल चलता हूँ" (1 कुरिन्थियों 11:1)।** इसमें स्त्रियों के बारे में भेदभावपूर्ण कथनों के लिए कोई जगह नहीं बचती। **नहीं, पौलुस स्त्रियों का मित्र है, जिसने मसीह की ज्योति की चमक में सत्य को जाना और देखा। उसकी यहूदी-यूनानी स्त्री-छवि भी सुसमाचार के प्रकाश में सुधारी गई।**

पौलुस के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह ठोकर का कारण न बने, पर साथ ही सुसमाचार के प्रति विश्वासयोग्य भी बना रहे। पुरुषों के लिए सिर ढकना, उनकी पृष्ठभूमि और परवरिश के अनुसार, धार्मिक पंथों में सामान्य प्रथा थी। विश्वासियों के बीच पुरुषों को प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करते समय सिर नहीं ढकना चाहिए। इसके विपरीत, पौलुस के अनुसार, स्त्रियों को, जब वे ठीक वही करती हैं जो पुरुष करते हैं, सिर ढकना चाहिए। और वह भी सब स्त्रियों को, उन्हें भी जिन्हें उस समय के समाज में सिर ढकने की अनुमति नहीं थी, अर्थात् दासियाँ, मुक्त की गई स्त्रियाँ या अविवाहित स्त्रियाँ। इसलिए दोनों बातें आंशिक रूप से संस्कृति-विरोधी भी हैं, क्योंकि यहाँ संस्कृति सुसमाचार के मूल के विरुद्ध जाती है। यह कोई निर्देश भी नहीं है (Armin Baum और Schnabel के विपरीत) कि सब स्त्रियाँ सड़क पर, अर्थात् सार्वजनिक जीवन में, सिर ढकें, क्योंकि संस्कृति सबसे निचले वर्ग की दासियों को इससे मना करती थी। विवाहित स्त्रियों का सिर ढकना या घूँघट डालना वैसे भी प्रथा थी।

पौलुस सिर ढकने का समर्थन पुरुष के अधीन होने के चिन्ह के रूप में भी नहीं करता। पुरुष की तुलना में स्त्री की अधीनता, उसका निचला दर्जा और कम मूल्य वैसे भी बहुत समय से पत्थर पर खुदे हुए थे। इसका प्रदर्शन करने की आवश्यकता नहीं थी। इस ओढ़नी का एक ठोस कार्य था; वह, यदि ऐसा कहें, एक कार्यात्मक चिन्ह थी, पदानुक्रम का प्रतीक कम या बिलकुल नहीं।

## पौलुस किसे संबोधित करता है? किसे सुधारा जाना है?

लगभग सभी व्याख्याकार इस बात से सहमत हैं कि यहाँ उन स्त्रियों को संबोधित किया गया है जो नई पाई हुई स्वतंत्रता के कारण उस समय सामान्य सिर ढकने की प्रथा को आगे निभाने का विरोध करती थीं। और यह ओढ़नी, उनके अनुसार, पुरुष के अधीन होने की अभिव्यक्ति और स्वीकृति थी, क्योंकि – जैसा इस वचन-भाग में

स्पष्ट रूप से सृष्टि से निकाला जाता है – स्त्री सामान्यतः पुरुष के और पत्नी विशेष रूप से पति के पदानुक्रम में अधीन या उसके बाद रखी गई है। यदि किसी को "पदानुक्रम" शब्द खटकता है और वह सृष्टि की व्यवस्था या पवित्र व्यवस्था(ओं) की बात करना पसंद करता है, तो उसे एक बात ध्यान में रखनी चाहिए: पुरुष और स्त्री के समान मूल्य और समान गरिमा के बावजूद वह एक असमानता को ही परमेश्वर की व्यवस्था के रूप में समर्थन देता है। पुरुष अगुवाई करता है और उत्तरदायी है, स्त्री अधीनता में पीछे चलती है।

यदि स्त्रियों का मुक्ति-चाहने वाला व्यवहार पौलुस के इस वचन-भाग का कारण है, तो यह समझाना होगा कि यह इन शब्दों से क्यों शुरू होता है कि **मसीह पुरुष का सिर** है। यह आरंभ ध्यान को पुरुषों की ओर ले जाता है, और वह भी इस तरह, मानो वे ही आगे के तर्क का कारण रहे हों।

Cynthia Long Westfall का मत है कि कुरिन्थुस में ऐसे पुरुष थे जो स्त्रियों को सामान्य ओढ़नी छोड़ देने का सुझाव देते थे या उन पर इसके लिए दबाव डालते थे। प्रतिष्ठित वर्ग की विवाहित स्त्रियाँ अपनी ओढ़नी उतारने को तैयार नहीं थीं। यह उस संस्कृति की प्रथा के विरुद्ध था जिसमें वे पली-बढ़ी थीं। उनका सिर ढकना सुरक्षा और गरिमा, शालीनता और नैतिक पवित्रता की अभिव्यक्ति था। वह अधीनता का प्रतीक नहीं था, पर हाँ, पत्नी के रूप में अपने पति से उनके जुड़े होने का चिन्ह अवश्य था।

दासियाँ और मुक्त की गई स्त्रियाँ, अविवाहित स्त्रियाँ (और शायद विधवाएँ भी?) सिर नहीं ढक सकती थीं, और सबसे निचले वर्ग के रूप में वे यौन छेड़छाड़ के आगे असुरक्षित छोड़ दी जाती थीं। वेश्याएँ न सिर ढकती थीं, न घूँघट डालती थीं, और उनके बाल कटे होते थे, अर्थात् किसी भी रूप में छोटे बाल। यदि वे विश्वास में आ जातीं तो क्या होता? पौलुस पत्री के आरंभ में (1:26-29) कहता है कि विश्वास में आने वाले बहुत-से लोग साधारण, गरीब लोग थे, ऊँचे या कुलीन वर्ग के नहीं। इसलिए इन स्त्रियों से कहना ज़रूरी था कि वे समाज की प्रथाओं के विपरीत सिर ढक सकती हैं। क्योंकि नई वाचा और नई सृष्टि की कलीसिया में वर्ग की अब कोई भूमिका नहीं है, जैसा कि गलातियों 3:28 भी पुष्टि करता है।

## कुरिन्थुस के मसीहियों की सांस्कृतिक स्थिति के पहलू

जब भी कोई इस प्रश्न की छानबीन करता है और इतिहासकारों के आँकड़ों पर निर्भर होता है, तो उसे अपने समय और समाज के प्रति पौलुस के दृष्टिकोण पर ध्यान देना चाहिए: संसार की रीति के, अर्थात् किसी भी संस्कृति के, अनुरूप नहीं बनना चाहिए, जब वह सुसमाचार के विरुद्ध हो (रोमियों 12:2)। सुसमाचार में "झुकने" की भी सीमाएँ हैं। यूनानियों के लिए यूनानी बनना (तुलना कीजिए 1 कुरिन्थियों 9:20-22) इसका अर्थ यह नहीं है कि मूर्ति के मंदिर में भोज पर बैठा जाए और मूर्तियों को बलि किया गया मांस खाया जाए। वैसे, संसार की रीति के बारे में पौलुस का आकलन – किसी युग के रीति-रिवाजों और प्रथाओं से भिन्न – कालातीत और सदा मान्य है।

इस लेख का विषय लिंग-प्रश्न और उससे जुड़े व्यवहार और बाहरी रूप-रंग के चारों ओर घूमता है:

"यूनानी-रोमी समाज में स्त्रियों के 'सही' व्यवहार के लिए क़ानून बनाना और उसे लागू करवाना अधिकारियों की एक मुख्य चिंता थी, क्योंकि उनका मानना था कि घर-गृहस्थी में अव्यवस्था का साम्राज्य की भलाई पर विद्रोही प्रभाव पड़ता है।"[6]

"पौलुस का मिशन गैर-यहूदियों के बीच सफल हो सके, इसके लिए मसीही स्त्रियों का व्यवहार उसके अनुरूप होना ज़रूरी था जो पहली शताब्दी के सामान्य यूनानी-रोमी जगत में स्त्रियाँ करती थीं। इसलिए जब पौलुस

कलीसिया में और घर में लिंग-भूमिकाओं की बात करता था, तो लिंग से जुड़ी उसकी चिंताएँ अक्सर मिशनरी होती थीं, और उसका उद्देश्य यह था कि विश्वासी संस्कृति में घुल-मिल जाएँ और साथ ही नैतिक रूप से शुद्ध बने रहें। पहली शताब्दी की संस्कृति के अनुरूप ढलना इक्कीसवीं शताब्दी की संस्कृति के अनुरूप ढलने से भिन्न बात थी। लिंग सामान्यतः कैसे व्यवहार करते हैं और एक-दूसरे से कैसे पेश आते हैं, इसके बारे में आधुनिक पश्चिमी धारणाएँ यूनानी-रोमी संस्कृति की धारणाओं से स्पष्ट रूप से भिन्न हैं।"[7]

"संरक्षक-आश्रित संबंध और पारस्परिकता, जो संस्कृति की आधारशिलाएँ हैं, पतियों और पत्नियों के संबंधों को भी आकार देती हैं।"[8] संरक्षक (Patron) से अर्थ है एक दाता या सहायक, जो पद या वर्ग में ऊँचा होता था, चाहे केवल अपनी समृद्धि या धन के कारण ही क्यों न हो। "यूनानी-रोमी जगत में पति और पत्नी सामान्यतः संरक्षण-व्यवस्था/संबंध में असमान साझेदार होते थे। पति उपकारकर्ता के रूप में कार्य करता था और पत्नी वैवाहिक संबंध में अधीन पक्ष होती थी, जब तक कि वह विवाह में बड़ा दहेज न लाई हो।"[9]

"(कुरिन्थुस) एक ऐसी जगह थी जहाँ पुरुषों के लिए उपलब्ध हर प्रकार की यौन गतिविधि मिलती थी (इसलिए 'कुरिन्थी स्त्री की तरह व्यवहार करना' का अर्थ था यौन अनैतिकता में पड़ना), और 'कुरिन्थी लड़की' शब्द वेश्या के लिए एक शिष्ट व्यंजना था। वहाँ कोई कुलीन उच्च वर्ग नहीं था; इसके बजाय कुरिन्थुस की समृद्धि ने नव-धनाढ्यों का एक वर्ग पैदा कर दिया था। फिर भी पौलुस ध्यान दिलाता है कि कुरिन्थुस की कलीसिया को अपने सदस्य केवल धनी अभिजात वर्ग से नहीं, बल्कि मुख्य रूप से उन लोगों में से मिले थे जिनके पास न प्रतिष्ठा थी न शक्ति (1 कुरिन्थियों 1:26)।"[10]

तो जब सब वर्गों के लोग, बिना किसी पिछले मसीही संस्कार के, विश्वास में और विश्वासियों की संगति में आए, तब भी ये लोग अपनी जीवन भर की बुरी आदतों से प्रभावित थे। यौनता हवा में थी; वह हर जगह उपलब्ध थी। कलीसिया का सामना इन्हीं विषयों और व्यवहारों से था।

## एक साथ इकट्ठा होने की प्रथा

वह बड़ी प्रजा (प्रेरितों के काम 18:10), जिसे परमेश्वर ने बंदरगाह-नगर कुरिन्थुस में पौलुस और उसके सहकर्मियों के द्वारा बुलाया था, एक ही जगह इकट्ठी नहीं हो सकती थी। जब तक कि वे रंगशाला या कोई अखाड़ा किराये पर न लेते, जो एक नए पंथ के लिए, जिसे मुख्यतः साधारण लोग मानते थे, बिलकुल असंभव था। इसलिए वे घरों में इकट्ठा होते थे, बड़े या छोटे घरों में, कुछ गिने-चुने भवनों में और अधिकतर साधारण घरों या आवासों में (जैसा कि इफिसुस में आज भी देखा जा सकता है)। जब वे इकट्ठा होते थे, तो स्त्रियाँ ही भोजन तैयार करती थीं (कभी-कभी साथ भी लाती थीं)। प्रभु भोज साझे भोजन का हिस्सा था।

घरेलू कलीसिया में पुरुषों और स्त्रियों पर वही लागू होता था जो पौलुस व्यक्त करता है। Westfall इसे इस प्रकार सार में कहती हैं: "इसलिए पुरुषों और स्त्रियों के बीच का अंतर कलीसिया में भूमिकाओं का भेद नहीं है, बल्कि यह है कि वे इन भूमिकाओं में अलग-अलग ढंग से कैसे कार्य करते हैं। स्त्रियाँ और पुरुष एक ही पदों में परमेश्वर की सेवा कर सकते हैं, पर उनकी अपेक्षाएँ अलग हैं, जिनमें लिंग-विशिष्ट बाहरी रूप शामिल है। यह कोई दोहरा मापदंड नहीं है, जिसमें पुरुषों पर कोई प्रतिबंध न हो जबकि स्त्रियाँ प्रतिबंधित हों; दोनों पर प्रतिबंध है।"[11]

"अंत में एक बात की ओर फिर से संकेत करना चाहिए, जो पौलुस के तर्कों के कथन-उद्देश्य में तो नहीं आती, पर महत्वपूर्ण है। पौलुस बिलकुल स्वाभाविक रूप से इस बात की चर्चा करता है कि स्त्रियाँ कलीसिया की सभा में

प्रार्थना करती हैं और भविष्यद्वाणी करती हैं। इसका अर्थ है कि स्त्रियाँ परमेश्वर की वास्तविकता और उसके वचन को ठीक उसी तरह सार्वजनिक रूप से व्यक्त करती हैं जैसे पुरुष।"[12]

## सार्वजनिक क्या है?

सामान्यतः सार्वजनिक क्षेत्र उसे कहा जाता है जहाँ हर किसी से मिलना होता है। कुरिन्थुस के बाज़ार में, बंदरगाह पर या मूर्ति के मंदिर में। अंततः अपने घर के बाहर सब कुछ सार्वजनिक है।

आराधना की सभा धनी या ऊँचे पद वाले मसीहियों के निजी घरों में होती थी, और उसी तरह कम धनी लोगों के घरों और कमरों में भी। क्या वह सार्वजनिक था? वह बाज़ार की स्थिति के समान तो नहीं था, पर अनजान लोगों या अविश्वासियों को इन सभाओं में आने की अनुमति थी। या तो पवित्र आत्मा उन्हें वहाँ ले आता था या मसीही उन्हें निमंत्रण देते थे। इस अर्थ में एक साथ इकट्ठा होना भी कोई बंद समाज नहीं, बल्कि वह स्थान है जहाँ सब लोग जीवित परमेश्वर से मिल सकते हैं।

इसलिए इस सभा में रीति-रिवाजों और प्रथाओं का पालन महत्वपूर्ण है, और वह भी पुरुषों और स्त्रियों दोनों के लिए समान रूप से। अविश्वासी को ठोकर नहीं लगनी चाहिए, बल्कि परमेश्वर के द्वारा, उसकी पवित्र और प्रभावशाली उपस्थिति के द्वारा, उसे दोषी ठहराया जाना चाहिए (1 कुरिन्थियों 14:16,23-25)।

कई व्याख्याकार यह प्रश्न उठाते हैं कि क्या इससे सभा के बाहर के लिए भी कोई वेश-संहिता संकेतित होती है। ध्यान से देखें तो यह न इस वचन-भाग का विषय है, न कुरिन्थियों का प्रश्न। यहाँ 1 कुरिन्थियों 10:31-33 का सुनहरा नियम लागू होता है, जो कहता है कि किसी के लिए ठोकर का कारण न बनो। विवाहित स्त्रियाँ घर से निकलते समय सिर ढकती हैं। दासियाँ ऐसा नहीं करतीं, पर आराधना-सभा में अवश्य करती हैं, जैसा पौलुस लिखता है।

## कुरिन्थुस में सिर ढकना

इस पर कुछ और उद्धरण और अधिक विस्तृत विचार। मेरा दृढ़ विश्वास है: केवल वही व्यक्ति पौलुस के इस वचन-भाग को ज्यों का त्यों आज पर लागू करता है जो सिर ढकने और घूँघट की प्रथा को नहीं समझता। और वह भी एक एक-आयामी, काले-सफ़ेद व्याख्या-शास्त्र में, जो अंत में एक संकुचित व्यवस्थावाद को उचित ठहराने का साधन बन जाता है, जैसा मैंने अक्सर देखा है और स्वयं भी अनुभव किया है।

"Michelle Auerback (मिशेल ऑरबैक) घूँघट के पक्ष के तर्क को इस प्रकार सार में कहती हैं: **'प्रतीकों, कथनों का अर्थ केवल उसी संस्कृति में होता है जो जानती है कि उनका अर्थ क्या है।'** पर पारंपरिक बाइबल-विद्वत्ता में अधिकांश लोगों ने यह मान लिया है कि 1 कुरिन्थियों 11:3-16 में घूँघट का अर्थ 'अधीनता' है, **बिना उन अर्थों को समझने का प्रयास किए जो प्राचीन पूर्वी भूमध्यसागरीय संस्कृति में स्त्रियों के लिए घूँघट के थे**, या अनेक आधुनिक संस्कृतियों में उसके अब भी व्यापक प्रयोग में।"[13]

"Bruce Winter (ब्रूस विंटर) कहते हैं कि रोमी साम्राज्य के समय 'निश्चित रूप से यह माना जा सकता है कि ढका हुआ सिर उस शालीनता और पवित्रता का प्रतीक था जिसकी अपेक्षा एक विवाहित स्त्री से की जाती थी।'"[14]

"पर अब हमारे पास उन संस्कृतियों की स्त्रियों के वृत्तांत उपलब्ध हैं जहाँ स्त्रियाँ घूँघट करती हैं, और वे एक अलग कहानी कहते हैं। हम पाते हैं कि इस्लाम और यहूदी धर्म में धर्मपरायण, कट्टरपंथी स्त्रियों की एक प्रबल धारा है,

जो ऐसे कारणों से घूँघट करती हैं जो 1 कुरिन्थियों 11:3-16 में पौलुस के तर्क से बहुत मिलते-जुलते लगते हैं। फिर भी हम पूरी तरह बाद की मानवशास्त्रीय समानताओं पर निर्भर नहीं हैं, जिनमें कालदोष का ख़तरा रहता है। **घूँघट उतारने से इनकार करने वाली स्त्रियों का इतिहास और घूँघट पहनने के कारण अश्शूरी संस्कृति तक पीछे खोजे जा सकते हैं।**"[15]

"**पौलुस की चिंता कलीसिया की उन सभी स्त्रियों तक फैली हुई लगती है जो भविष्यद्वाणी करती हैं और प्रार्थना करती हैं – दासियों, मुक्त की गई स्त्रियों, अविवाहितों और विधवाओं सहित।** रोमी मात्रोना (Matrona)[16] का पहनावा उसके पद को और साथ ही 'रोमी समाज में यौन रूप से परिपक्व स्त्री के रूप में उसकी स्थिति और भूमिका' को प्रकट करता था। **दूसरी ओर, बिना ढका सिर यौन उपलब्धता का अर्थ रखता था, इसलिए किसी दासी या मुक्त की गई स्त्री के लिए घूँघट करना वर्जित था।**"[17]

"घूँघट के नियम बनाना पुरुषों का विशेषाधिकार था; वही सबसे स्वाभाविक रूप से कोई दिशा-निर्देश तय करने की आवश्यकता देखते। **रोमी प्रथा में पुरुष और स्त्रियाँ दोनों प्रार्थना करने के लिए अपना सिर ढकते थे। स्पष्ट है कि पौलुस कलीसियाओं में पुरुषों को रोमी प्रथा के विपरीत खुले सिर प्रार्थना करना सिखाता था (1 कुरिन्थियों 11:4), इसलिए पुरुषों ने शायद सोचा कि जो हंस के लिए अच्छा है, वह हंसिनी के लिए भी अच्छा है। पर जबकि पुरुष का खुला सिर परमेश्वर के सामने उसकी नम्रता का चिन्ह था, स्त्री का खुला सिर परमेश्वर के सामने स्त्री की नम्रता का चिन्ह नहीं था; बल्कि वह उसकी यौन उपलब्धता के बारे में एक संकेत भेजता था, जो प्रलोभन के समान हो सकता था।** पर जो उचित था, उसके बारे में सांस्कृतिक आदर्शों को कोई व्यक्ति कथित धर्मवैज्ञानिक प्राथमिकताओं के पक्ष में छोड़ भी सकता था।"[18]

"सामान्यतः बिना प्रश्न किए यह मान लिया जाता है कि पौलुस कुरिन्थी स्त्रियों को सुधार रहा था। **पर यह खंड अधिक सुसंगत बैठता है यदि यह माना जाए कि कुरिन्थी स्त्रियाँ अपनी ओढ़नी या घूँघट उतारने से इनकार कर रही थीं**, पर अधिकार रखने वाले लोग, घरेलू कलीसिया के पुरुष, या शायद उनके अपने पति भी, उन पर घूँघट उतारने के लिए दबाव डाल रहे थे या उन्हें प्रोत्साहित कर रहे थे। यह उस प्रकार की स्थिति है जो घूँघट करने वाली संस्कृतियों में बार-बार घटती है।"[19]

घूँघट सामाजिक अंतरों को, वर्गों के ऊँच-नीच को, दिखाई देने योग्य बनाता था। यह वर्ग-भेद 1800 वर्षों तक, आधुनिक युग तक, देखा जा सकता है। "इससे न केवल यह संकेत मिलता था कि ऐसी स्त्रियाँ यौन रूप से उपलब्ध हैं, बल्कि सामाजिक व्यवस्था और वर्गों के बीच का भेद भी बना रहता था। [...] **सब स्त्रियों के घूँघट करने का पौलुस का समर्थन कलीसिया में सामाजिक संबंधों को बराबर कर देता था; जहाँ तक यह घूँघट उसके हाथ में था, उसने कलीसिया की उन स्त्रियों के लिए सम्मान, आदर और यौन पवित्रता सुनिश्चित की, जिन्हें संस्कृति में यह दर्जा नहीं दिया जाता था।**"[20]

"निकट पूर्व की संस्कृति में उच्च वर्ग की स्त्री अपनी निष्ठा और विनम्रता का संकेत देने के लिए अपना सिर ढकती थी। उसका ढका हुआ सिर सीधे उसके अपने सम्मान और उसके परिवार के सम्मान का भी संकेत देता था – विशेष रूप से उसके paterfamilias (प्राचीन घराने के परिवार-प्रमुख) के सम्मान का, जो उसकी पहचान का स्रोत था। पौलुस सृष्टि के वृत्तांत के आधार पर घूँघट के पक्ष में एक धर्मवैज्ञानिक तर्क प्रस्तुत करने के लिए इस प्रतीक के जटिल अर्थ का सहारा लेता है।"[21]

Eckhard J. Schnabel लिखते हैं: "रोमी-यूनानी सांस्कृतिक क्षेत्र में स्त्रियों का सिर ढकना (केवल धार्मिक संदर्भों में ही नहीं) स्वाभाविक रूप से विश्वसनीय बात थी। रोमी मूर्तियाँ, विशेष रूप से सम्राट के परिवार की स्त्रियों के चित्र-

शिल्प और कब्रों की उभरी नक्काशियाँ, विवाहित स्त्रियों को सिर पर खींची हुई स्टोला (palla) के साथ या vitta, अर्थात् ऊन की सिर-पट्टी या बाल-पट्टी, के साथ दिखाती हैं, जिन्हें शालीनता और पवित्रता का प्रतीक माना जाता था। स्त्रियों के लिए सार्वजनिक स्थान पर स्टोला पहनना अनिवार्य नहीं था। पर स्टोला पहनना उनकी पवित्रता का प्रतीक था। औगुस्तुस (Augustus) के विवाह-क़ानूनों ने यह तय किया कि वेश्याओं को शालीन पत्नी, मात्रोना, की स्टोला पहनने की मनाही है।"[22] Armin Baum (आर्मिन बाउम) सिर ढकने के बारे में लिखते हैं:

## प्राचीन काल में स्त्री की ओढ़नी का क्या अर्थ था?

1 कुरिन्थियों 11:5-6 की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को समझने के लिए हमें कम से कम ईसा पूर्व दूसरी सहस्राब्दी तक पीछे जाना होगा। अश्शूर के राजा तिग्लत्पिलेसेर प्रथम (1115-1076 ई.पू.) के शासनकाल के मध्य-अश्शूरी नियमों में लिखा है: "यदि कोई नागरिक अपनी घर में बंद रखी गई स्त्री (अर्थात अपनी रखैल, जिससे उसका विवाह नहीं हुआ है) पर घूँघट डालना चाहे, तो वह अपने पाँच या छह साथियों को बैठाए, उनकी उपस्थिति में उस पर घूँघट डाले और कहे: 'यह मेरी पत्नी है।' तब वह (सचमुच) उसकी पत्नी है।" अतः विवाह के समय पत्नी का सिर एक कपड़े से ढका जाता था। ढका हुआ सिर विवाहित स्त्री का दिखाई देने वाला चिह्न था।

यह रीति सदियों तक बनी रही। नए नियम के समय में भी, जब पौलुस ने कुरिन्थियों के नाम अपनी पहली पत्री लिखी, यह बहुत प्रचलित थी। अन्ततः प्राचीन काल में पत्नी का घूँघट हमारे आधुनिक दुल्हन के घूँघट का भी पूर्वज है, जिसे दुल्हन कलीसिया में होने वाले विवाह में पहनती है। हज़ारों वर्षों से विवाह के समय स्त्री को सचमुच शब्दशः "ओढ़नी ओढ़ाई जाती है"। सिर की ओढ़नी अपने अनगिनत रूपों में सदा एक ही बात का प्रतीक है, अर्थात पत्नी की नई स्थिति का।

यहूदी धर्म में सिर की ओढ़नी उतारने का अर्थ था कि वैवाहिक विश्वासयोग्यता पर प्रश्नचिन्ह लग गया है। व्यभिचारिणी की ओढ़नी तो ज़बरदस्ती भी उतार ली जाती थी। स्वेच्छा से ओढ़नी छोड़ देना पुरुषों के लिए उपलब्ध होने का संकेत था।

**स्त्रियों को ओढ़नी कहाँ पहननी चाहिए थी? जब वे आराधना-सभा में सुनाई देने वाले ढंग से भाग लेती थीं, अर्थात् जब सब उपस्थित लोगों का ध्यान बोलने वाली की ओर होता था। पौलुस के अनुसार सब भाग ले सकते थे और लेना भी चाहिए था। तो क्या इससे यह मान लेना चाहिए कि वे आराधना-सभा में हमेशा**

**सिर ढके रहती थीं? यह बहुत संभव है, पर हम यह नहीं जानते। यदि यहाँ पौलुस को शब्दशः लिया जाए, तो वे केवल तभी सिर ढकती थीं जब वे आराधना-सभा में अपनी आवाज़ उठाती थीं।**

"यह अध्ययन बाइबल-विद्वत्ता में प्रचलित इस धारणा का खंडन करता है कि घूँघट स्त्री के अपने पति के अधीन होने का प्रतीक था। घूँघट पहनना कोई निजी प्रतीक नहीं, बल्कि एक सार्वजनिक प्रथा थी, जिसे क़ानून और रिवाज नियंत्रित करते थे, और पुरुषों और स्त्रियों दोनों से अपेक्षा की जाती थी कि वे इस रिवाज के अधीन रहें। **संक्षेप में, घूँघट स्त्री के सम्मान, दर्जे और सुरक्षा का प्रतिनिधित्व करता था।**"[23]

"यह आम बात थी (और है) कि स्त्रियाँ अपना घूँघट उतारने से इनकार करती हैं, क्योंकि वह सम्मान और सुरक्षा का प्रतीक है। अधिक संभावना यह है कि जिन स्त्रियों को सार्वजनिक स्थान पर घूँघट करने की अनुमति नहीं थी, वे सभा में घूँघट पहनना चाहती थीं, यह दर्शाने के लिए कि वे मसीह के द्वारा धर्मी ठहराई गई हैं। सब स्त्रियों को घूँघट करने का पौलुस का निर्देश संस्कृति-विरोधी था और स्त्रियों के प्रति सद्भावपूर्ण था। सब स्त्रियों के घूँघट पहनने की प्रथा ने मसीही कलीसिया में सामाजिक संबंधों को बराबर कर दिया।"[24]

**यह कि पुरुष धार्मिक कार्यों के समय सिर ढकते थे, रोमियों के यहाँ अच्छी तरह प्रमाणित है, यूनानियों के यहाँ केवल आंशिक रूप से। विचारों और व्याख्याओं में यह ध्यान देने योग्य है कि पुरुषों के सिर ढकने पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है।**

कुरिन्थुस में मंदिर-बलि चढ़ाते हुए कैसर औगुस्तुस की एक मूर्ति शासक को एक घूँघट के साथ दिखाती है, जो उसके सिर को ढके हुए है। Richard Oster (रिचर्ड ऑस्टर) बताते हैं कि यूनानी पुरुष मूर्तिपूजक देवताओं के लिए धार्मिक बलियों के समय अक्सर अपना सिर ढकते थे। संभव है कि पौलुस मूर्तिपूजा में कुरिन्थियों की पिछली प्रथा पर टिप्पणी कर रहा था। Cyprian (किप्रियन) ने तीसरी शताब्दी में भी इस पर टिप्पणी की: 'तुम्हारा सिर उस अधर्मी और दुष्ट घूँघट से मुक्त रहा, जिससे वहाँ बलि चढ़ाने वालों के बंदी सिर ढके जाते थे' (De lapsis 2)। Brian Rosner (ब्रायन रोज़नर) विश्वसनीय ढंग से दिखाते हैं कि 1 कुरिन्थियों 6:12-20 में पौलुस उन पुरुषों को लेकर चिंतित था जो पवित्र आयोजनों में यौन क्रियाएँ करते थे। इस प्रकार पुरुषों के सिर ढकने के बारे में पौलुस की चिंता मंदिर-वेश्याओं के साथ यौन क्रियाओं के विरुद्ध एक फटकार भी हो सकती थी। फिर भी पौलुस ने पद 4 में इस विषय को विस्तार नहीं दिया, जिससे संकेत मिलता है कि उसने इस स्थिति का उपयोग केवल स्त्रियों से तुलना के लिए किया।

## वचन-भाग की व्याख्या के लिए दिशा-सूत्र और पहलू

इन पंक्तियों के अधिकांश पाठक पौलुस के इस वचन-भाग को पहली बार नहीं पढ़ रहे हैं। उनके लिए आगे कुछ पहलू दिए जा रहे हैं, जो शायद वचन-भाग तक पहुँचने का एक नया मार्ग खोलें। ये पहलू इस वचन-भाग और संबंधित अध्ययनों के साथ बार-बार काम करने का परिणाम हैं, अचानक आसमान से नहीं टपके। वे उस अभ्यस्त पढ़ने की रीति में न फिसलने में सहायता कर सकते हैं, जो वचन-भाग को स्त्री (स्त्रियों) की पदानुक्रमिक अधीनता के चश्मे से समझती है, जो – जैसा पहले बताया जा चुका है – विषय ही नहीं है।

- वचन-भाग सबसे बढ़कर इस बात पर बल देता है कि सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिए कैसे हो।
- बात आराधना-सभा में परमेश्वर की महिमा को उभारने की है, इस प्रकार कि पुरुष और स्त्रियाँ ऐसा व्यवहार करें और ऐसे वस्त्र पहनें कि ध्यान उनकी ओर न खिंचे।

- (कुछ) पुरुष पौलुस की शिक्षा का कारण और प्रेरक थे, क्योंकि वे माँग करते थे कि स्त्रियाँ अपनी ओढ़नी छोड़ दें।[25]
- सांस्कृतिक और सामाजिक रीति-रिवाजों और प्रथाओं की बात की गई है। लज्जा और अनादर धार्मिक या धर्मवैज्ञानिक अर्थ में नहीं, बल्कि सामाजिक भावना के अर्थ में हैं।
- इसलिए बात पौलुस की कालातीत आज्ञाओं की नहीं है, भले ही वह अपने तर्क में सृष्टि के इतिहास का उल्लेख करता है।
- मसीह में स्वतंत्रता और अपने परिवेश के लिए ठोकर न बनने के बीच एक तनाव है।
- बात बालों को ढकने की है (केवल सिर की नहीं), और पूरे शरीर को ढकने वाले घूँघट की भी नहीं।
- कहीं भी बात उस पदानुक्रमिक सृष्टि की व्यवस्था की नहीं है जिसमें पुरुष स्त्री से ऊपर है। कहीं भी बात स्त्री के पुरुष के अधीन होने की भी नहीं है। दोनों प्रार्थना करते हैं और भविष्यद्वाणी करते हैं, समान दर्जे के साथ और बराबरी से।
- पौलुस अंततः सब स्त्रियों के बारे में बात करता है, केवल विवाहित स्त्रियों के बारे में नहीं। उसका ध्यान पुरुष और स्त्री के एक अधिक सामान्य संबंध पर बना रहता है, जो सृष्टि में आधारित है और तब भी लागू होता है जब कोई स्त्री दासी हो और औपचारिक रूप से उसका कोई पति, पिता या अभिभावक न हो जो उसका सिर हो।
- वस्त्र या केश-विन्यास जैसी बाहरी बातें सुसमाचार द्वारा निर्धारित नहीं की जातीं। पुरानी वाचा की उपासना-विधि में वे आवश्यक हैं, पर नई वाचा में नहीं, जिसे कुरिन्थी प्रभु भोज में मनाते थे।
- बात 21वीं शताब्दी में पुरुषों और स्त्रियों के व्यवहार-नियमों की नहीं है।

आगे इस वचन-खंड के हर एक पद पर विचार किया गया है।

## 1 कुरिन्थियों 11:3-16[26]

> 3 पर मैं चाहता हूँ कि तुम जान लो कि
> मसीह हर एक पुरुष का सिर है,
> और स्त्री का सिर पुरुष है,
> और मसीह का सिर परमेश्वर है।

पौलुस अंततः सिर ढकने के विषय पर बात करने के लिए तीन जोड़े प्रस्तुत करता है। बात परमेश्वर, फिर मसीह, उसके नीचे पुरुष और अंत में स्त्री की किसी सीढ़ी या पद-क्रम की नहीं है। यह आदेशों की कोई श्रृंखला नहीं है। अंत में स्त्री नहीं, बल्कि परमेश्वर है, जिससे सब कुछ आता है (पद 12)। तीन जोड़े उपमाओं के रूप में **एक-दूसरे के बराबर** खड़े हैं। बात उद्धार की किसी व्यवस्था की नहीं है। मसीह के साथ स्त्री का संबंध मसीह के साथ पुरुष (या उसके पति) के संबंध से किसी भी तरह भिन्न नहीं है।[27]




**सिर** (Haupt) शब्द जर्मन भाषा के प्रयोग में लाक्षणिक अर्थ में तुरंत किसी अधिकारी व्यक्ति की ओर ले जाता है, जैसे उदाहरण के लिए "Hauptmann" (कप्तान, अर्थात् "मुख्य व्यक्ति")। लगभग सभी व्याख्याकार भी इसे ऐसे ही समझते हैं। कुछ अनुवाद तो सिर शब्द का प्रयोग ही नहीं करते, बल्कि उसे सीधे अधीनता के रूप में व्यक्त कर देते हैं। NeÜ (जर्मन बाइबल अनुवाद) तुरंत **Oberhaupt** (प्रधान, मुखिया) शब्द का प्रयोग करता है और इस प्रकार इसमें कोई संदेह नहीं छोड़ता कि स्त्रियों के सिर ढकने का आधार देने के लिए पौलुस का तर्क कथित रूप से किस बात पर टिका है। "अधिकांश विद्वानों ने माना है कि 1 कुरिन्थियों 11:3-16 का विषय पुरुषों का अधिकार और स्त्रियों की अधीनता है। इसका एक कारण यह है कि लातीनी, अंग्रेज़ी और जर्मन में 'सिर' अधिकार का एक रूपक है, इसलिए इस खंड की व्याख्या के इतिहास में 'अधिकार' का अर्थ स्वाभाविक-सा प्रतीत हुआ है।"[28]

**क्योंकि इस पूरे वचन-भाग में अधिकार और अधीनता का प्रश्न है ही नहीं, इसलिए यह स्पष्ट करना होगा कि सिर का लाक्षणिक अर्थ क्या है।** इस पर, जैसी कि अपेक्षा की जा सकती है, पदानुक्रम के समर्थकों और समानता के समर्थकों के बीच तीखा विवाद हुआ है। **जो भी हो, यह वचन-भाग सिर के अर्थ को स्रोत और उद्गम के रूप में समर्थन देता है (पद 8,12)।**

"Westfall यह तर्क देती हैं कि संदर्भ में उत्पत्ति 1–2 की ओर संकेत यूनानी भाषा में 'सिर' के संभावित लाक्षणिक अर्थों की विविधता और विस्तार को सीमित कर देते हैं, ताकि वह जीवन के स्रोत की ओर संकेत करे, जिससे इसका भावानुवाद इस प्रकार किया जा सकता है: **'पर मैं चाहता हूँ कि तुम पहचानो कि हर पुरुष का जीवन मसीह से आता है, स्त्री का जीवन पुरुष से आता है, और मसीह का जीवन परमेश्वर से आता है।'**"[29] ... "क्योंकि पुरुष स्त्री के जीवन का उद्गम है, इसलिए वह उसका सिर है। यदि पुरुष स्त्री का सिर है और वे एक तन हैं, तो पौलुस यह निष्कर्ष निकालता है कि स्त्री उसकी देह है। पौलुस 'सिर' के रूपक का उपयोग विवाह पर, पुरुष और स्त्री पर, मसीह और कलीसिया के संबंध पर और मसीह और परमेश्वर पिता के संबंध पर लागू करते हुए कर पाता है; वह 'सिर' का प्रयोग इन संबंधों की एक-दूसरे के द्वारा व्याख्या करने के लिए करता है।"[30]

"κεφαλή (सिर) के अर्थ-क्षेत्र में मनुष्य या पशु का सिर आता है, जिसे ऐसे रूपकों तक बढ़ाया गया जिनमें पहचान, स्रोत, जीवन और भरण-पोषण शामिल हैं। मुहावरेदार यूनानी (भाषा-प्रयोग) में इसका अर्थ 'अधिकार' नहीं था, जो Liddell and Scott's Greek-English Lexicon में इसकी प्रविष्टि से स्पष्ट है।"[31] ... "इस प्रकार पौलुस κεφαλή का प्रयोग करता है: **पारिवारिक संबंधों के संदर्भ में जीवन और पहचान के उद्गम या स्रोत की ओर संकेत करने के लिए** – पति और पत्नी, परिवार के रूप में कलीसिया, और परमेश्वर पिता और उसका पुत्र, यीशु मसीह।"[32]

"आदम के साथ मानवजाति के संबंध को धर्मविज्ञानी '**सिरत्व**' (Hauptschaft), 'स्वाभाविक सिर' या 'वाचा का सिर' कहते हैं।" ... "आदम मानवजाति का सिर है, क्योंकि वह जैविक जीवन का स्रोत है। इसलिए आदम को मानवजाति के सामने या उसके ऊपर कोई प्रधानता, सम्मान, अधिकार या आराधना प्राप्त नहीं होती**; बल्कि यह उद्गम से उत्पन्न पहचान पर आधारित एक संबंध है**, जिसका पौलुस नकारात्मक मूल्यांकन करता है। यीशु सिर के रूप में आदम का स्थान लेता है, **क्योंकि यीशु वह आत्मिक, जीवन देने वाला स्रोत है जो कलीसिया को भरता है, और कलीसिया उसके साथ एक जीवित एकता बनाती है (इफिसियों 1:22; 4:15-16; कुलुस्सियों 1:18)।**"[33]

"यदि मनुष्यों पर मसीह के सिरत्व को उनके जीवन/अस्तित्व के स्रोत के रूप में समझा जाए, तो तीनों जोड़ों के बीच की उपमा समानांतर हो जाती है, और उसकी छानबीन पौलुस के धर्मविज्ञान की हमारी समझ में भरपूर योगदान देती है।" ... "इसी प्रकार पुरुष और स्त्री के बीच और पति और पत्नी के बीच के संबंध की पौलुस की व्याख्या को आदम के स्वाभाविक/जैविक सिरत्व की ऐतिहासिक समझ के अनुरूप समझा जा सकता है। **यह एक पारिवारिक संबंध है।**"[34] **... "यूनानी संस्कृति में किसी कुलपिता के सिरत्व की अवधारणा में परिवार का प्रतिनिधित्व और उसकी पहचान शामिल थी।**"[35]

"अंत में, 'सिर' के तीन संबंधों में से अंतिम संबंध उसके पर्याय के रूप में प्रयोग के लिए महत्वपूर्ण है। **Anthony Thiselton (एंथनी थिसेल्टन) बताते हैं कि शारीरिक सिर पूरे शरीर का भी प्रतिनिधित्व करता था। यदि कोई अपने भौतिक सिर का अनादर करता था, तो पूरा व्यक्ति अशुद्ध हो जाता था। पौलुस ने ध्यान दिया कि किसी व्यक्ति का रूप-रंग दूसरों पर और स्वयं उस पर वापस पड़ता है।** इसलिए 'सिर' शब्द का बार-बार प्रयोग पदानुक्रमिक पदों को चिन्हित करने या लिंगों के बीच भेद पैदा करने के लिए नहीं था। बल्कि यह एक काव्यात्मक युक्ति थी, जो कुरिन्थुस की उपासना-क्रियाओं को बदलने के लिए थी, ताकि एक ऐसे मूर्तिपूजक धर्म से संबंध से बचा जा सके जो यौन अनुष्ठानों में गहराई से उलझा हुआ था।"

उस समय के प्रयोग में इसके लाक्षणिक अर्थ का एक निश्चित विस्तार है। सिर एकता, पहचान और उद्गम का भी प्रतीक है और किसी व्यक्ति की सर्वोच्च प्रतिष्ठा का भी। कुल मिलाकर यह दिखाता है कि पुरुष और स्त्री कैसे जुड़े हुए हैं और एक-दूसरे से कैसे संबंधित हैं, और कोई सिर से कैसे जुड़ा होता है।

**उनके समान दर्जे में, उस संस्कृति के अनुसार जिसमें वे रहते हैं, अलग-अलग बाहरी व्यवहार होता है। भूमिकाएँ अलग नहीं हैं; 1 कुरिन्थियों 11 में तो भूमिकाएँ ठीक एक जैसी ही हैं, क्योंकि दोनों प्रार्थना करते हैं और भविष्यद्वाणी करते हैं।** पर उसमें बाहरी रूप में अंतर हैं, और उनका आधार उस समय की संस्कृति में है। पौलुस इन सांस्कृतिक परिस्थितियों को लेता है और उन्हें सृष्टि के विचार से भी जोड़ पाता है।

> 4 हर एक पुरुष जो सिर पर कुछ रखे हुए प्रार्थना करता या भविष्यद्वाणी करता है, वह अपने सिर का अपमान करता है।

प्रार्थना करना और भविष्यद्वाणी करना, अर्थात् भविष्यद्वाणी के रूप में बोलना, आराधना-सभा का हिस्सा हैं। सभा में परमेश्वर की उपस्थिति परमेश्वर से बात करने में – विनती और आराधना में – और इकट्ठी कलीसिया से परमेश्वर के बोलने में भी प्रकट होती है। मसीह की देह के सब अंग, पुरुष और स्त्रियाँ दोनों, ये दोनों काम करने के लिए बुलाए गए हैं।

पुरुषों को प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करते समय सिर पर/सिर के ऊपर कुछ नहीं रखना चाहिए। **यह पौलुस का एक कथन है, एक ऐसी बात जिसे उस समय की (धार्मिक) संस्कृति के संदर्भ के बिना स्पष्ट नहीं किया जा सकता। अनेक वर्षों तक मैंने, दूसरों की तरह, इसका कारण तुरंत आसपास के संदर्भ में, फिर पूरी पत्री में, फिर पूरे नए नियम में और last but not least पुराने नियम में खोजा। बिना किसी सार्थक और विश्वसनीय परिणाम के।**

रोमी लोग धार्मिक कार्यों के समय सिर ढकते थे, जबकि यूनानी अधिकतर नहीं (Keener)। जो पुरुष अब यीशु को मानते हैं, वे उन प्रथाओं और व्यवहारों से दूरी बनाते हैं जो कुरिन्थुस और अन्य स्थानों पर मूर्तिपूजक पंथों में होते थे।

"(पुरुष) लज्जाजनक व्यवहार करता है, क्योंकि प्रार्थना करते समय उसे यीशु मसीह के सम्मान से अधिक अपनी निजी प्रतिष्ठा की चिंता है। मसीह के संबंध में इस कथन का अर्थ है कि यीशु को मानने वाले जो समाज के ऊँचे वर्गों से हैं और प्रार्थना करते समय अपनी ऊँची स्थिति का दिखावटी प्रदर्शन करते हैं, वे मसीह के लिए लज्जा लाते हैं, क्योंकि वे मसीह की नहीं, बल्कि अपनी महिमा करते हैं (तुलना कीजिए पद 7–8 में तीन बार दोहराया गया शब्द δόξα (सम्मान, महिमा))।[36] ... वे उपस्थित लोगों का ध्यान परमेश्वर की ओर ले जाने के बजाय अपनी ओर खींचते हैं, जिससे सब कुछ आता है (पद 12) और जिसे प्रार्थना में पुकारा जाता है (पद 13)। **रोमी समाज में, यदि किसी ने संयोग से अपना टोगा सिर पर खींच रखा हो, तो सिर खोलना आदरणीय लोगों की उपस्थिति का संकेत देता था** (Plutarch, Mor 266) I"[37]

"**इस संदर्भ में पुरुष (बिना सिर ढके) परमेश्वर के सामने परमेश्वर के बिना-सजे स्वरूप के रूप में प्रकट होकर अपनी नम्रता दिखाता है, और स्त्री सार्वजनिक स्थान और आराधना में अपनी महिमा/सुंदरता को पीछे रखकर परमेश्वर का, अपना और अपने परिवार का सम्मान करती है।**"[38] क्योंकि स्त्रियाँ इसका उलटा करती हैं: वे सिर ढकती हैं।

पुरुष किस सिर का अपमान करता है? सबसे पहले अपने ही सिर का। वह अपने आप का, उस व्यक्ति का अपमान करता है जिसका प्रतिनिधित्व उसका सिर करता है। और वह मसीह का, अपने सिर का, अपमान करता है, क्योंकि वह (जानबूझकर या अनजाने में) सिर ढककर अपने आप को वह सम्मान देता है जो परमेश्वर की उपस्थिति में उसका हक़ नहीं है।

> 5 पर हर एक स्त्री जो खुले सिर प्रार्थना करती या भविष्यद्वाणी करती है, वह अपने सिर का अपमान करती है; क्योंकि यह ठीक वैसा ही है जैसे उसका सिर मुँड़ा हुआ हो।

"**पुरुषों को प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करते समय टोगा को सिर पर खींचने की रोमी, अभिजात परंपरा छोड़ देनी चाहिए। पर स्त्रियों को हमेशा केवल सिर ढककर ही प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करनी चाहिए। 'खुले सिर' वाक्यांश स्त्रियों के किसी विशेष केश-विन्यास का वर्णन नहीं करता, बल्कि कपड़े की एक ओढ़नी का, ठीक-ठीक कहें तो सिर पर खींची हुई स्टोला (palla) का।**"[39]

"पौलुस का तर्क इस समझ का समर्थन करता है, जब वह कहता है कि खुला सिर स्त्री के लिए लज्जा की बात है, वैसे ही जैसे उसका सिर मुँड़वा दिया जाए, जो उसकी प्रतिष्ठा को नष्ट कर देता है और इसलिए उसका मूल्य घटा देता है (1 कुरिन्थियों 11:5-6)। खुले सिर का यह अर्थ रोमी क़ानून में भी था, जो कहता था कि यदि कोई स्त्री

मात्रोना की तरह वस्त्र पहने हुए न हो (घूँघट पहनना या अपने बाल बाँधना शामिल) और कोई पुरुष उसे बहकाने या परेशान करने का प्रयास करे, तो उस पर शारीरिक हानि का मुक़दमा नहीं चलाया जा सकता था।"[40]

"पौलुस उन कुरिन्थी स्त्रियों की आलोचना करता है जो सिर पर खींची हुई स्टोला के बिना कलीसिया की सभा में आकर जानबूझकर या अनजाने में ऐसे मौन संकेत भेजती थीं कि वे 'उपलब्ध' हैं। पर कलीसिया की आराधना-सभाएँ वह जगह नहीं हैं जहाँ स्त्रियाँ संकेत भेजें और पुरुषों द्वारा 'परखी जाने वाली वस्तुएँ' बन जाएँ। इस तर्क का कि बात स्त्री के प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करने की है, न कि सार्वजनिक रूप से सामने आने की, पौलुस की दृष्टि से यह उत्तर दिया जा सकता है कि वह कलीसिया की सभाओं को ठीक एक सार्वजनिक स्थान के रूप में समझता है, जिसमें बाहर के लोग आमंत्रित होते हैं और उपस्थित रहते हैं।"[41]

Schnabel से भिन्न, Westfall – जैसा पहले बताया गया – पुरुषों को उन लोगों के रूप में देखती हैं जो स्त्रियों की ओढ़नी हटाना चाहते थे। कारण चाहे जो भी हो: सुसमाचार की स्वतंत्रता, या नकारात्मक रूप में, छिपे हुए यौन उद्देश्य। **इसलिए पौलुस उन पुरुषों के सामने, जो स्त्रियों से ओढ़नी छोड़ने की माँग करते थे, बड़े तीखे ढंग से यह रखता है कि उनकी माँग का अंतिम परिणाम एक स्त्री के लिए क्या होता।** मुँड़ी हुई स्त्री व्यभिचारिणी या वेश्या के रूप में सारी लज्जा अपने ऊपर ले लेती थी। "पौलुस आराधना में स्त्रियों के सार्वजनिक रूप से सामने आने को एक नंगी की गई और दंडित व्यभिचारिणी के सामाजिक कलंक के समान ठहराता है, जिसका दर्जा किसी वेश्या की 'प्रतिष्ठा' के बराबर था।"[42]

> 6 क्योंकि यदि स्त्री ढकी हुई न हो, तो बाल भी कटवा ले; पर यदि स्त्री के लिए बाल कटवाना या मुँड़वाना लज्जा की बात है, तो वह अपने आप को ढके।

क्योंकि सिर न ढकने की इस माँग का परिणाम स्त्रियों के लिए अंत तक सोचा जाना आवश्यक है, इसलिए पौलुस उन स्त्रियों के लिए, जो पुरुषों की बात मानकर सिर न ढकतीं, सामाजिक संदर्भ में विनाशकारी परिणामों को दोहराता है। "पौलुस मान सकता है कि कुरिन्थी इस व्यंग्यपूर्ण आह्वान को एक तर्क के रूप में समझेंगे।"[43]

"किसी ऐसी स्त्री का सामने आना जिसने अपने बाल कटवा लिए हों या जिसका सिर मुँड़वा दिया गया हो, 'लज्जाजनक' है, क्योंकि ऐसा रूप व्यभिचार में पकड़ी गई स्त्री के अपमान की याद दिलाता है। सार्वजनिक रूप से व्यभिचारिणी के रूप में नंगा किया जाना और कटे बालों के कारण सबके द्वारा ऐसी पहचाना जाना लज्जा की बात है। पौलुस के मत में ठीक यही लज्जा तब होती है जब स्त्रियाँ बिना ओढ़नी के कलीसिया में सामने आती हैं। यदि कोई स्त्री सार्वजनिक अपमान से बचना चाहती है, **तो उसे अपने आप को ढकना चाहिए**।"[44]

ओढ़नी छोड़ने की माँग का यह परिणाम सांस्कृतिक संदर्भ में स्पष्ट है। पर पौलुस ओढ़नी के समर्थन में ठीक अगले पद से सृष्टि की घटना से धर्मवैज्ञानिक कारण भी देगा। **मैं इसे बहुत महत्वपूर्ण समझता हूँ कि यहीं पहले से ध्यान दिला दूँ: ये कारण सर्वकालिक नहीं हैं। वे एक सांस्कृतिक घटना से संबंधित हैं, न कि इसके उलट। इसलिए पौलुस लिंग-प्रश्न का कोई धर्मविज्ञान विकसित नहीं करता, ताकि फिर उससे ओढ़नी की आवश्यकता निकाले। तब तो ओढ़नी आज तक एक ऐसा नियम होती जिसका पालन स्त्रियों को आराधना में करना पड़ता।** पर 21वीं शताब्दी के पश्चिमी जगत में सिर ढकना अब कोई विषय नहीं है, कोई सामाजिक परंपरा नहीं है। यह शर्मनाक है जब मसीही इससे एक ऐसी परंपरा बना लेते हैं जो उनकी छोटी, अलग-थलग दुनिया के लिए व्यवस्था बन जाती है।

> 7 क्योंकि पुरुष को तो सिर नहीं ढकना चाहिए,

> क्योंकि वह परमेश्वर का स्वरूप और महिमा है;
> पर स्त्री पुरुष की महिमा है।

अब पौलुस सृष्टि के वृत्तांत से अंतर्दृष्टियाँ और निष्कर्ष लाता है, **जो स्त्रियों और पुरुषों के उस समय के सांस्कृतिक व्यवहार का कारण बताते हैं, आज के व्यवहार का नहीं**। बात अब भी आराधना-सभा की ही है।

यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि पौलुस यह नहीं कहता कि स्त्री परमेश्वर का स्वरूप नहीं है। वह पुरुष का स्वरूप भी नहीं है, बल्कि उसकी महिमा है (Medema)। यहाँ पौलुस का तर्क विशेष है, क्योंकि बात सांस्कृतिक, अर्थात् समय से बँधी परंपराओं की है। समानांतरता से यह निकलता है: **दोनों परमेश्वर का स्वरूप हैं, पर स्त्री साथ ही पुरुष की महिमा भी है।**

"यद्यपि स्त्री 'मिट्टी से बने मनुष्य' का स्वरूप धारण करती थी, वास्तव में उसकी रचना सृष्टि में एक ऊँचे क्रम से हुई, क्योंकि आदम पहले ही परमेश्वर के एक सीधे कार्य से रचा जा चुका था और उसमें प्राण फूँके जा चुके थे। वह उसमें से बनाई गई। **इसलिए स्त्री पुरुष की महिमा है, या महिमा की महिमा।** पर इस 'अधिक' को न तो पौलुस के लेखों में और न ही सृष्टि के वृत्तांत में पदानुक्रमिक बताया गया है। पदानुक्रम (पृथ्वी और उसके अन्य प्राणियों पर मनुष्य का प्रभुत्व) की बात उत्पत्ति 1:27-28 में की गई है, पर उत्पत्ति 2 में दूसरे विषयों की बात की गई है।"[45]

"हम 1 कुरिन्थियों 11:7 को कैसे समझें, जहाँ पौलुस कहता है कि पुरुष परमेश्वर के स्वरूप और महिमा में है, पर स्त्री (इसके विपरीत) पुरुष की महिमा है? **उत्तर यह है कि हव्वा की, आदम और हव्वा के हर वंशज की तरह, एक से अधिक पहचान थी: वह परमेश्वर के स्वरूप में भी रची गई थी और आदम की महिमा भी थी, क्योंकि वह सीधे उसी में से रची गई थी। वह आदम के स्वरूप में अद्वितीय थी और उसका एक अंश भी थी, इसलिए वे इस प्रकार एक तन थे जो अविभाज्य था** और जो माता-पिता के साथ संतान के संबंध से भिन्न था (उत्पत्ति 2:23-24)।"[46]

"यह कथन तब समझ में आता है जब यह देखा जाए कि पौलुस पुरुष और स्त्री की भिन्नता में मनुष्य के स्वभाव पर टिप्पणी नहीं कर रहा, बल्कि सिर ढकने के प्रश्न के संदर्भ में इस बात पर बल दे रहा है कि स्त्री पुरुष की 'प्रतिच्छवि' है। यह कथन कि स्त्री पुरुष की δόξα (महिमा) है, इसका अर्थ है '**स्त्री के परमेश्वर का स्वरूप होने के गुण में कोई कमी नहीं, और इस प्रकार उसकी गरिमा का कोई अवमूल्यन नहीं, क्योंकि पौलुस उत्पत्ति 2 के आधार पर तर्क करता है, जिसके अनुसार स्त्री तो ठीक पुरुष की हड्डियों में की हड्डी और उसके मांस में का मांस है, अर्थात् अन्य सभी प्राणियों से भिन्न, उसके बराबर की है**'।"[47]

जैसा ऊपर कहा गया, स्त्री आदम का स्वरूप धारण करती है (1 कुरिन्थियों 15:49), और मसीह में वह बाकी मानवजाति की तरह परमेश्वर का स्वरूप और महिमा भी धारण करती है। फिर भी पौलुस यह भी कहता है कि पुरुष का रूप परमेश्वर के स्वरूप और महिमा को ऐसे ढंग से दिखाता है जो स्त्री के रूप से भिन्न है, क्योंकि स्त्री का रूप या उसकी सुंदरता पुरुष की महिमा है (1 कुरिन्थियों 11:7)। **पौलुस ध्यान दिलाता है कि आराधना के समय "पुरुष की महिमा" (अर्थात् उसकी (पत्नी) स्त्री) को ढका या छिपाया जाना चाहिए, ताकि आराधना में बात न तो पुरुष का और न ही स्त्री का सम्मान या गुणगान करने की हो।**

"पर जब बाहरी रूप की बात आती है, तो पुरुषों की महिमा और स्त्रियों की महिमा में अंतर है। संस्कृति के अनुरूप पौलुस मानता था कि परमेश्वर ने स्त्री को अधिक आकर्षक या अधिक महिमामय होने के लिए रचा, ताकि

वह पुरुष की महिमा हो।"[48]

> 8 क्योंकि पुरुष स्त्री से नहीं, बल्कि स्त्री पुरुष से है;

स्त्री पुरुष की महिमा कैसे बनी? पुरुष सिर, अर्थात् स्त्री का उद्गम, कैसे बना? वह उसमें से, उसकी पसली से, रची गई।

"इसलिए यह कोई भी धारणा कि सृष्टि के वृत्तांत का उद्धरण अनिवार्य रूप से किसी सर्वकालिक नियम की ओर संकेत करता है, एक समस्याग्रस्त पूर्वधारणा है। यीशु और पौलुस दोनों मानते थे कि मानवजाति के नर और नारी के रूप में रचे जाने का बाइबल का वृत्तांत लिंग के बारे में सर्वकालिक नियम देता है, पर **पौलुस ने 1 कुरिन्थियों 11:3-16 में घूँघट के पक्ष में अपने तर्क को सहारा देने के लिए भी उसका उद्धरण दिया, जो इसलिए एक संस्कृति से बँधा प्रयोग है। यह दावा करना एक तार्किक भ्रांति है कि सर्वकालिक नियमों या सार्वभौमिक सिद्धांतों का उपयोग केवल मानक या सार्वभौमिक निष्कर्षों को सहारा देने के लिए ही किया जा सकता है।"**[49]

**बात पुरुष और स्त्री के स्वभाव या कार्य की नहीं, बल्कि समाज के संदर्भ में उनके एक-दूसरे से जुड़े होने की है, जैसा पद 9 दिखाता है।**[50]

> 9 क्योंकि पुरुष भी स्त्री के लिए नहीं रचा गया,
> बल्कि स्त्री पुरुष के लिए।

"पौलुस इस बात पर बल देता है कि सृष्टि से ही स्त्री पुरुष से जुड़ी हुई है। इसका अर्थ कोई अवमूल्यन नहीं है और यह अपमानजनक ढंग से नहीं कहा गया – यह διά + कर्म कारक वाली रचना से नहीं, बल्कि संदर्भ में तर्क की दिशा से निकलता है, जिसमें बात पुरुष और स्त्री के स्वभाव या गुण की नहीं है, और पद 11–12 से भी। **यह तथ्य कि रोमी-यूनानी समाज में पत्नियाँ अक्सर अपने पतियों से काफ़ी छोटी होती थीं, कुरिन्थी स्त्रियों को समय की प्राथमिकता और पुरुष और स्त्री के कार्यात्मक जुड़ाव के उस तर्क को समझने में सहायता करता था, जिसे पौलुस बाइबल के सृष्टि-इतिहास से विकसित करता है।**"[51]

फिर भी तीन बातें "स्त्री पुरुष के लिए रची गई" (11:9) के अर्थ की व्याख्या पर फिर से विचार करने में योगदान देती हैं: पहली, यह दावा कि "स्त्री पुरुष के लिए रची गई" इस कथन की पुष्टि करता है कि "स्त्री पुरुष की महिमा है"; दूसरी, इस दावे की व्याख्या उत्पत्ति 2:4-25 के सृष्टि-वृत्तांत द्वारा होती है; तीसरी, यह इस निष्कर्ष का आधार देता है कि "स्त्री को अपने सिर पर अधिकार होना चाहिए" (पद 10)।[52]

पद 9 से यह आभास होता है कि प्राथमिकता पुरुष को मिलती है और स्त्री "केवल" पूरक के रूप में कार्य करती है। पर जैसा Westfall ज़ोर देकर कहती हैं, हव्वा की रचना तो आदम को सहायता की आवश्यकता होने का चिन्ह है। इसलिए उसे एक "मज़बूत" स्थिति मिलती है, अपनी ज़िम्मेदारी वाली स्थिति। इसकी पुष्टि अब पद 10 में व्यक्त होती है!

> 10 इसलिए स्त्री को स्वर्गदूतों के कारण सिर पर एक अधिकार रखना चाहिए।

अनगिनत अनुवादों ने यहाँ यूनानी पाठ में "अधिकार या प्रभुता का चिन्ह" जोड़ दिया है! वहाँ केवल अधिकार, सामर्थ्य या प्रभुता लिखा है। यह जोड़ मुझे आश्चर्यचकित नहीं करता, क्योंकि – जैसा आरंभ में कहा गया – पौलुस के इस वचन-भाग को स्त्री पर पुरुष के पदानुक्रम की पुष्टि के रूप में समझा गया और इसने अनुवाद को प्रभावित

किया। दूसरे शब्दों में, यह जोड़ एक व्याख्या है। इस पद को उतनी ही अच्छी तरह – या बेहतर कहें: अनिवार्य रूप से – इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है:

## इसलिए स्वर्गदूतों के कारण स्त्री को अपने सिर पर अधिकार होना चाहिए।

(ऐसा ही Schnabel, Westfall, Bushnell, Keener, Schirrmacher आदि कहते हैं)

"एक अमूर्त संज्ञा के रूप में, 'अपने सिर पर एक अधिकार (अर्थात् नियंत्रण)' के अर्थ में, अर्थात् अपने आप पर। यह अंतिम अर्थ मेल खाता है क) ἐξουσία (अधिकार) शब्द के अमूर्त संज्ञा के रूप में 'सामर्थ्य' के अर्थ में प्रचलित प्रयोग से (अर्थात् वह सामर्थ्य जो किसी के पास होती है, न कि दूसरों की सामर्थ्य जिसे कोई निष्क्रिय रूप से अनुभव करता है), ख) इस वाक्यांश की वाक्य-रचना से, और ग) तर्क की दिशा से।[53]

पौलुस ध्यान दिलाता है कि मसीही संगति में घूँघट करना स्त्री का अधिकार है, और यह प्रतीक को रूपांतरित कर देता है। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से अधीनता या पदानुक्रमिक अधीनस्थता का चिन्ह नहीं है। इसका अर्थ यह हो सकता है कि स्त्री को स्त्रियों के पहनावे के विषय में अपना निर्णय स्वयं लेने में सक्षम होना चाहिए, क्योंकि उसे संसार और स्वर्गदूतों का न्याय करने के लिए ठहराया गया है, जैसा वह 1 कुरिन्थियों 6:2-3 में पहले ही कह चुका था। "**परंपरागत ओढ़नी पहनकर पत्नी अपने सिर पर अपना नियंत्रण प्रदर्शित करती है, इस प्रकार कि वह अपने पति के प्रति अपनी विश्वासयोग्यता और अपनी व्यक्तिगत सामाजिक स्थिति को स्वीकार करती है। कलीसिया की सभा के सार्वजनिक वातावरण में सिर खोलने से स्त्रियाँ जो कामुक संकेत भेजती हैं, उनसे बचा जाता है, पुरुष और स्त्री का जुड़ाव बना रहता है, और प्रार्थना और भविष्यद्वाणी में स्त्री के द्वारा परमेश्वर की वास्तविकता की अभिव्यक्ति प्रामाणिक बनी रहती है**।"[54]

"परिणामस्वरूप, पौलुस के उद्गमों के धर्मविज्ञान में पुरुष और स्त्री स्पष्ट रूप से एक-दूसरे पर निर्भर हैं। 1 कुरिन्थियों 11:3-16 के संदर्भ में पौलुस बड़ी कूटनीति से स्त्रियों की उस किसी भी अनुचित स्वतंत्रता को नरम कर देता है जो घूँघट करने की उनकी इच्छा के प्रति उसके समर्थन से उत्पन्न हो सकती है।"[55]

किन स्वर्गदूतों की बात है, इस प्रश्न पर Schnabel सार प्रस्तुत करते हैं: "स्वर्गदूतों के लिए निम्नलिखित व्याख्या-संभावनाएँ सुझाई जाती हैं। 1. कलीसिया के अगुवे, जैसे प्रकाशितवाक्य 2:1 में। 2. दूसरी कलीसियाओं से आए दूत, जिन्हें कुरिन्थुस की कलीसिया में स्त्रियों के व्यवहार से ठोकर लगती है। 3. अविश्वासी नागरिकों के दूत, जो मसीही कलीसिया में रुचि रखते हैं और यीशु को मानने वालों की गतिविधियों की रिपोर्ट पाने के लिए अपने किसी आश्रित (या दास) को कलीसिया की सभा में भेजते हैं। 4. वे स्वर्गदूत जो ईस्टर की सुबह स्त्रियों को यीशु के जी उठने का समाचार सुनाते हैं। 5. वे स्वर्गदूत जो यशायाह 6:2 के अनुसार परमेश्वर के सिंहासन के सामने अपने पंखों से अपना मुँह और पाँव ढकते हैं। 6. उत्पत्ति 6:1–4 के पतित स्वर्गदूत, जिनका शिकार वे स्त्रियाँ बनती हैं जो खुले सिर प्रार्थना करती हैं। 7. वे स्वर्गदूत जिनका न्याय विश्वासी करेंगे (तुलना कीजिए 6:3)। 8. भले स्वर्गदूत, जो आराधना में उपस्थित रहते हैं, परमेश्वर का प्रतिनिधित्व करते हैं और प्रार्थना और भविष्यद्वाणी को आगे पहुँचाते हैं। तीसरी और अंतिम दोनों व्याख्याएँ सबसे अधिक विश्वसनीय हैं।"[56]

Westfall की तरह मैं बिंदु 7 से सहमत हूँ, क्योंकि स्वर्गदूतों का न्याय विश्वासियों के, स्त्रियों सहित, अत्यंत ऊँचे दर्जे की ओर संकेत करता है, जिसके साथ परिपक्वता, आत्मिक विवेक और बुद्धि होनी चाहिए।

> 11 तौभी न तो स्त्री पुरुष के बिना है

> और न पुरुष स्त्री के बिना
> प्रभु में।

सिर ढकने के प्रश्न में स्त्रियों की पूरी स्वतंत्रता और अपनी ज़िम्मेदारी के बावजूद वे पुरुषों से जुड़ी रहती हैं, विवाह में और कलीसिया में, विवाहित भी और अविवाहित भी। पौलुस एक पारस्परिक निर्भरता पर बल देता है, जिसे इससे सटीक ढंग से कहा ही नहीं जा सकता। और जो सृष्टि की घटना के अनुरूप है। जो कोई पद 8 और 9 से यह निष्कर्ष निकाले कि स्त्री कोई दासी जैसी है, हीन है, जिस पर प्रभुता की जाए या जिसकी अगुवाई की जाए – चाहे विवाह में, परिवार में या कलीसिया में – वह भूल करता है। पौलुस पहले से ही इसकी रोकथाम करता है और बिना किसी समझौते के स्त्री और पुरुष की समानता पर बल देता है। **"प्रभु में" नई सृष्टि के अस्तित्व का वर्णन करता है, जो अपने समय की संस्कृति से अलग खड़ी होती है, जिसमें यह समान गरिमा और समानता नहीं थी!**

"स्त्री हीन नहीं है, बल्कि 'प्रभु में' पुरुष और स्त्री समान अधिकार के साथ एक-दूसरे पर निर्भर हैं। पर Πλήν का अर्थ हमेशा विरोधात्मक नहीं होता; पौलुस के यहाँ इसका अर्थ 'केवल, जो भी हो' है, 'जो चर्चा को समाप्त करता है और मुख्य बात को उभारता है'। पौलुस लिखता है: **पर प्रभु में न तो स्त्री पुरुष के बिना (कुछ) है, न पुरुष स्त्री के बिना।** अनुवाद में आरंभ में रखा गया वाक्यांश 'प्रभु में' यूनानी पाठ में वाक्य के अंत में है, अर्थात् ज़ोर वाले स्थान पर। पौलुस बल देता है कि पुरुष और स्त्री एक-दूसरे से संबंधित हैं। **यह वाक्य कि 'स्त्री पुरुष के बिना कुछ नहीं है' यूनानी-रोमी समाज में कोई विशेष आश्चर्य की बात नहीं है, शायद 'नई स्त्री' की सोच को छोड़कर (पद 5 पर देखिए)। आश्चर्यजनक वाक्य यह है कि 'पुरुष स्त्री के बिना कुछ नहीं है'। समानांतर ढंग से बना यह वाक्य यीशु मसीह में परमेश्वर के उद्धार के कार्य के परिणाम के रूप में पुरुष और स्त्री के समान दर्जे पर बल देता है।"**[57]

> 12 क्योंकि जैसे स्त्री पुरुष से है,
> वैसे ही पुरुष स्त्री के द्वारा है;
> पर सब कुछ परमेश्वर से है।

पौलुस पद 11 के अपने तर्क को और गहरा करता है और विचार में ठीक वैसे ही आगे बढ़ता है जैसे पद 8 में। स्त्री, हव्वा, आदम में से बनाई गई है। आदम के बिना कोई हव्वा न होती। एक ही बार की घटना, सचमुच का एक आरंभ (kick-off)। तब से हर पुरुष बार-बार स्त्री से जन्म लेता है।

इससे कोई भी अपने लिए कोई विशेषाधिकार या प्रधानता नहीं निकाल सकता; हर एक का अपना परमेश्वर-प्रदत्त मूल्य है। क्योंकि सब कुछ परमेश्वर से, सृष्टिकर्ता से, सिर से निकलता है।

> 13 तुम आप ही विचार करो: क्या स्त्री का खुले सिर परमेश्वर से प्रार्थना करना शोभा देता है?

पौलुस आत्मिक विवेक को चुनौती देता है। वह कुरिन्थुस के पुरुषों को संबोधित करता है और गंभीरता से उनसे पूछता है। यदि वे स्त्रियों से, या कुछ स्त्रियों से, सिर न ढकने की माँग करते हैं, तो वे उन आवश्यक बातों को भूल जाते हैं जो सिर ढकने से जुड़ी हुई थीं।

"वह तर्क देता है कि वह चाहता है कि सब स्त्रियाँ प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करते समय अपने बाल ढकें, वे भी जिन्हें संस्कृति में घूँघट करने की अनुमति नहीं है, जैसे उदाहरण के लिए दासियाँ।"[58]

"पद 13 में पौलुस शिष्टता के आधार पर तर्क करता है, ऐसा तर्क जिसे कुरिन्थी मसीहियों को क़ायल कर देना चाहिए: **क्या स्त्री के लिए बिना ओढ़नी परमेश्वर से प्रार्थना करना शोभा देता है?** यदि यूनानी संस्कृति में τὸ πρέπον अभिव्यक्ति का अर्थ, τὸ δίκαιον, τὸ καλόν और τὸ ἀγαθόν की तरह, 'पूरे जीवन को समेटता है, क्योंकि सामाजिक जीवन बहुत-से सद्गुणों की माँग करता है', तो इसमें वेश-संहिता के प्रश्न भी शामिल हैं।"[59]

"πρέπον ἐστίν (क्या शोभा देता है, क्या शालीन है) वाक्यांश समकालीन लेखों में इस अपेक्षा की ओर संकेत करता है कि व्यक्ति प्रचलित नियमों के अनुरूप व्यवहार करे – रोमी संस्कृति की एक मूलभूत श्रेणी, विशेष रूप से औगुस्तुस के विवाह-क़ानूनों के कारण, जिनमें व्यवहार से लेकर वेश-संहिता तक सब नियंत्रित था। क्योंकि कुरिन्थी समाज के नियमों और अपेक्षाओं को जानते थे, पौलुस अपेक्षा करता है कि वे पूछे गए प्रश्न का उत्तर 'हाँ' में देंगे।"[60] "बात उस रीति की नहीं है जो प्रार्थना करने के सही ढंग को नियंत्रित करती है, बल्कि शिष्टता के उन नियमों की है जो समाज में लागू हैं, जिन्हें कुरिन्थी जानते हैं और जो 'प्रभु में' नए अस्तित्व के द्वारा रद्द नहीं हुए।"[61]

"घूँघट की आज्ञा को न तो स्त्रियों के विरुद्ध विवाद के रूप में समझा जाना चाहिए और न ही स्त्री के पुरुष के अधीन होने के रूप में, क्योंकि घूँघट उसकी सुरक्षा था और उस दर्जे और सम्मान का चिन्ह था जो यूनानी-रोमी संस्कृति में एक स्त्री को प्राप्त हो सकता था।"[62]

मैं इस बात को दोहराता हूँ कि पौलुस जिस उत्तर की अपेक्षा करता है, उसका आधार धर्मवैज्ञानिक नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक है: लोग अपने आप को ढाल लेते हैं, ताकि ठोकर का कारण न बनें।

> 14 क्या स्वभाव ही तुम्हें नहीं सिखाता कि यदि पुरुष लंबे बाल रखे, तो यह उसके लिए अनादर (लज्जा) की बात है,

"पहले पौलुस फिर से पुरुष की बात करता है: **क्या स्वभाव ही तुम्हें नहीं सिखाता कि यदि पुरुष लंबे बाल रखे, तो यह उसके लिए लज्जा की बात है?** पौलुस फिर अपेक्षा करता है कि इस प्रश्न का उत्तर स्वाभाविक रूप से 'हाँ' में दिया जाएगा। 'स्वभाव' (φύσις) अभिव्यक्ति प्रकृति की उस मान्य व्यवस्था की ओर संकेत करती है, जिसमें पुरुषों और स्त्रियों की बनावट और पुरुषों और स्त्रियों का रूप-रंग आता है। निस्संदेह पौलुस यह नहीं कहना चाहता कि 'प्रकृति' पुरुषों के बाल छोटे उगाती है। 'लज्जा' (ἀτιμία) का उल्लेख, पद 13 के πρέπον की तरह, चीज़ों की स्वाभाविक व्यवस्था में नियम के रूप में मान्य प्रथा को नाम देता है। प्रकृति का हवाला देने पर पूर्ण सहमति की अपेक्षा की जाती थी। राज्य और उसके प्रशासन के सबसे ऊँचे प्रतिनिधि भी किसी बात के स्वभाव के आधार पर तर्क करते थे, 'जो ऐसे तर्कों को सर्वोच्च अधिकार देता है'।"[63]

"कुरिन्थुस में रहने वाले वयस्क पुरुष लंबे नहीं, बल्कि छोटे बाल रखते थे। लंबे बाल पुरुषत्व के नकार का संकेत देते थे और अक्सर निष्क्रिय समलैंगिक प्रवृत्तियों का संदेह पैदा करते थे, जिन पर रोमी समाज में सामाजिक कलंक लगा था। पौलुस कुरिन्थी मसीहियों को याद दिलाता है कि कलीसिया के पुरुष सदस्य सामान्य रीति के अनुसार छोटे बाल रखें।"[64]

**स्वभाव सिखाता है? क्या स्वभाव यीशु के चेले का शिक्षक है? निश्चय ही नहीं, क्योंकि शिक्षक पवित्र आत्मा है, न कि पाप से छुई और बिगड़ी हुई प्रकृति। नहीं, जैसा Schnabel लिखते हैं, बात समाज की एक स्थिर व्यवस्था की है, उसकी जो लंबे समय से ऐसे ही किया जाता है और इस प्रकार संस्कृति बन गया है।** हमारे समय से कोई उपयुक्त तुलना ढूँढ़ना कठिन है। क्योंकि आज केश-विन्यास और पहनावे में सब कुछ संभव है। हमारा उत्तर-आधुनिक युग, जिसमें कोई पूर्ण सत्य होना ही नहीं चाहिए, पूर्ण व्यक्तिवाद से भरा है।

**इस तर्क में स्वभाव एक व्यक्तिपरक व्यवस्था है, जैसी वह प्राचीन युग में लोगों द्वारा कमोबेश स्वीकार की और जी जाती थी। अनादर – या और कड़े शब्दों में अनुवाद करें: लज्जा – परमेश्वर के सामने नहीं, बल्कि कुरिन्थुस के लोगों के सामने और उनके लिए है। नाज़ीर के, या अबशालोम या शिमशोन के, पौलुस के और शायद यीशु के लंबे बाल परमेश्वर के सामने लज्जा नहीं हैं। लज्जा उस ठोकर से मेल खाती है जिससे मसीहियों को सुसमाचार के कारण बचना चाहिए था, जहाँ तक यीशु के अनुयायियों के रूप में उनके लिए किसी भी तरह संभव था।**

मैं केवल संक्षेप में उस शरीर-वैज्ञानिक समझ का उल्लेख करता हूँ जो सदियों पहले बन चुकी थी और स्थापित हो चुकी थी। इस समझ के अनुसार पुरुष का वीर्य (शुक्राणु) सिर में बनता था और वहीं से आता था। लंबे बाल वीर्य के प्रवाह को रोकते या धीमा करते और संतान उत्पन्न करने को हानि पहुँचाते।

> 15 पर यदि स्त्री लंबे बाल रखे, तो यह उसके लिए आदर की बात है, क्योंकि बाल उसे ओढ़नी के बदले दिए गए हैं?

अब "स्वभाव" स्त्रियों और उनके केश-विन्यास या बनावट के विषय में क्या सिखाता है?

"स्त्रियों के लिए रीति अलग है। **क्या स्वभाव तुम्हें नहीं सिखाता कि स्त्री के लिए यह आदर की बात (है) यदि वह लंबे बाल रखे?** स्त्रियाँ अपने बाल लंबे रखती थीं। मूर्तियाँ स्त्रियों को हमेशा लंबे बालों के साथ दिखाती हैं। विशेष रूप से संपन्न स्त्रियों के लंबे बाल कलात्मक ढंग से सँवारे जाते थे।"[65]

प्राचीन काल में स्त्री के बाल सामान्यतः लालसा की वस्तु माने जाते थे (Keener)। जो उन्हें नहीं ढकती थी, वह – इस व्याख्या के अनुसार – लालसा जगाना चाहती थी। उच्च वर्ग की स्त्रियाँ कभी-कभी इसकी परवाह नहीं करती थीं, ताकि अपनी बड़ी मेहनत से गूँथी हुई चोटियों और उनमें पहने आभूषणों का प्रदर्शन कर सकें। कुरिन्थुस की कलीसिया में, और दूसरे स्थानों पर भी, अलग-अलग संस्कृतियाँ आपस में मिलती थीं।

"ऐसा लगता है कि जिस ढंग से पौलुस महिमा को स्त्रियों और उनके बालों पर लागू करता है, उसके कारण वह मानता है **कि स्त्रियाँ देखने में महिमा की महिमा हैं – अर्थात् स्त्रियों की महिमा अधिक है। यह तथ्य कि स्त्री पुरुष के लिए रची गई (1 कुरिन्थियों 11:9), उसकी अधिक सुंदरता और पुरुषों के लिए उसके आकर्षण के उद्देश्य की ओर संकेत करता है। यह इस ओर भी संकेत करता है कि आदम ही वह था जिसे हव्वा की साथी, सहभागिनी के रूप में आवश्यकता थी; उसकी रचना से लाभ आदम को हुआ, न कि इसके उलट।"**[66]

"बल्कि पौलुस का तर्क यह है कि आराधना में स्त्री का 'सिर' ढका होना चाहिए, ताकि सम्मान परमेश्वर की ओर जाए। 'सिर' का रूपक इस तर्क के लिए आवश्यक है। पुरुष स्त्री का सिर है (शब्दशः), स्त्री का सिर सबसे बढ़कर उसके पति की महिमा है, और उसके सिर के बाल उसकी महिमा हैं, और उसके पति की महिमा भी।"[67]

"एक स्त्री की सुंदरता ईर्ष्या जगाती है और साथ ही उसके पति के दर्जे को दिखाती है, जो आराधना में परमेश्वर के सम्मान से सीधी प्रतिस्पर्धा में होता। **बात परमेश्वर के सम्मान और महिमा की है, न कि घरेलू कलीसिया के पुरुषों के सम्मान और महिमा की, और न ही प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करने वाली स्त्रियों की महिमा और सुंदरता की।"**[68]

"यह पौलुस के तर्क का आरंभ-बिंदु तो है, और वह परिवार-प्रमुख (paterfamilias) के साथ स्त्री के संबंध के बारे में सांस्कृतिक आदर्शों की पुष्टि करता प्रतीत होता है, पर उसके तर्क के विकास ने वास्तव में पुरुषों और स्त्रियों के

संबंध को बराबर कर दिया, उनके अपने-अपने मूल्य को स्थापित किया और उनके उद्गम की पारस्परिकता को उभारा: यद्यपि स्त्री पुरुष से आई, पुरुष भी स्त्री से आया। **उसका ध्यान और उसकी चिंता पत्नियों पर पतियों के अधिकार या नियंत्रण की पुष्टि करना या उसे मज़बूत करना नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि परमेश्वर की महिमा हो।"**[69]

"स्त्री पुरुष की महिमा है, और उसके बाल उसकी महिमा हैं; इसलिए उसे आराधना के समय उन्हें ढकना चाहिए। पौलुस कहता है कि बाल स्त्री की महिमा हैं, क्योंकि वे उसका आवरण/उसकी ओढ़नी हैं (1 कुरिन्थियों 11:15)। **इसका अर्थ है कि स्त्री के बाल सुंदरता बढ़ाने वाली एक सजावट की तरह (एक दुपट्टे/ओढ़नी की तरह) काम करते हैं, जो उसके रूप को उभारते हैं।** घूँघट करने वाली संस्कृतियाँ मानती हैं कि एक आदरणीय स्त्री के बाल उसके पति के देखने और आनंद लेने के लिए सुरक्षित रहने चाहिए, और इसलिए उन्हें सार्वजनिक रूप से नहीं देखा जाना चाहिए।"

> 16 पर यदि कोई विवाद करना ठीक समझे, तो न हमारी ऐसी रीति है और न परमेश्वर की सभाओं की।

कुरिन्थुस में बहुत-सी बातों पर पहले ही काफ़ी झगड़े थे। सिर ढकने को लेकर एक और झगड़ा नहीं भड़कना चाहिए था। आराधना में भाग लेते समय ढके सिर वाले पुरुषों या खुले सिर वाली स्त्रियों की रीति नहीं होनी चाहिए थी, और स्पष्ट है कि यह और कहीं भी न ज्ञात थी न प्रचलित। यह कुरिन्थुस के उन संदेहवादियों के विरुद्ध अंतिम तर्क है जो हर बात पर प्रश्न उठाते हैं: सब मसीही और कलीसियाएँ (रोमी साम्राज्य में) ऐसा ही करती हैं जैसा पौलुस ने वर्णन किया है। सभा में पुरुष बिना ओढ़नी के और स्त्रियाँ ओढ़नी के साथ प्रार्थना करती हैं।

"पौलुस पद 16ख में ('**न हमारी ऐसी कोई रीति है और न परमेश्वर की कलीसियाओं की**') इस संकेत के साथ समाप्त करता है कि कोई प्रेरितिक परंपरा नहीं है जो ऐसी प्रथा को उचित ठहरा सके। और वह ध्यान दिलाता है कि परमेश्वर की कलीसियाओं (αἱ ἐκκλησίαι τοῦ θεοῦ) में से किसी में भी इस व्यवहार का कोई समानांतर नहीं है। Chr. Wolff टिप्पणी करते हैं: 'यदि कुरिन्थी अपनी इस नई बात पर अड़े रहते, तो वे परमेश्वर के अधिकार के अधीन खड़ी अन्य उद्धार-प्राप्त कलीसियाओं की संगति से टूटकर अलग हो जाते'।"[70]

## आज के लिए प्रासंगिकता

परमेश्वर का वचन कालातीत है। कोई भी वचन नहीं टलेगा। पर कुछ बातें ऐसी हैं जो किसी विशेष युग से संबंधित हैं और उसी युग को संबोधित हैं।

ओढ़नी के द्वारा स्त्रियों को अपनी ओर ध्यान खींचने, अपने बालों की महिमा दिखाने और पुरुषों का (शायद कुछ स्त्रियों का भी) ध्यान भटकाने से बचना था। परमेश्वर की महिमा को ऊँचा उठाया जाना, उसका गुणगान और स्तुति की जानी थी। परमेश्वर की महिमा, उसकी उपस्थिति, एक साथ इकट्ठा होने का केंद्र थी। आज भी आराधना में कोई बात मनुष्य को ऊँचा न उठाए; कोई भी अपनी ओर ध्यान या सम्मान न खींचे।

स्त्रियाँ अपने बाहरी रूप से, अपनी स्वाभाविक या सजी-धजी सुंदरता से परमेश्वर के सम्मान में से कुछ न छीनें। **यह इस वचन-भाग का नैतिक सिद्धांत है, जो आज तक लागू है। कोई वक्ता, प्रचारक, कोई भी जो अपने जीवन की गवाही या मिशन-रिपोर्ट देता है, कोई गायक, कोई वादक, कोई भी मनुष्य – आज भी ठीक वैसे ही जैसे तब – अपने पहनावे से अपनी ओर ध्यान न खींचे।**

"जहाँ तक सिर ढकने की प्रथा का प्रश्न है, पश्चिमी समाजों में बहुत समय से यह आम नहीं रहा कि स्त्रियाँ सिर ढककर विश्वासयोग्य पत्नियों के रूप में अपनी स्थिति का संकेत दें [इस्लामी देशों में, और इसलिए इस्लामी क्षेत्रों की कलीसियाओं में, यह अलग है! – HJR]। यदि ऐसी स्थिति में मसीही पत्नियाँ बिना सिर ढके कलीसिया में सक्रिय हैं, तो ठीक इसलिए कि वे जिस नगर में रहती हैं, वहाँ सार्वजनिक स्थानों पर भी बिना सिर ढके आती-जाती हैं। **सिर का न ढका होना कोई संकेत नहीं भेजता। जब कुछ मसीही यह माँग करते हैं कि पत्नियाँ 'पवित्रशास्त्र की आज्ञाकारिता' के कारण आज भी सिर ढकें, तो प्रेरित पौलुस के निर्देशों को ठीक 'आज्ञाकारिता' से नहीं समझा और लागू किया जाता: पौलुस की चिंता सिर ढकने की नहीं, बल्कि उन पारंपरिक परंपराओं की जानबूझकर अवहेलना और उपहास की है जो पूरे समाज के लिए महत्वपूर्ण और मूलभूत हैं।** यदि पश्चिमी यूरोप की कलीसियाओं में स्त्रियाँ सिर ढकती हैं, तो यह पौलुस द्वारा माँगी गई उस परंपरा के प्रति अनुरूपता नहीं है जो पत्नी की पवित्रता और निष्ठा का प्रतीक है, बल्कि ऐसा व्यवहार है जो ठीक अनुरूप नहीं है – पश्चिम में वैवाहिक निष्ठा और शालीनता को अब मुश्किल से ही किसी विशेष प्रकार के पहनावे से दर्शाया जाता है। यह अधिकतर शब्दों में होता है, अर्थात् विवाह और जीवनसाथी के मूल्य के बारे में ठोस कथनों के द्वारा।"[71] और निस्संदेह विवाह की अँगूठी के द्वारा, जो स्पष्ट रूप से दिखाती है कि उसे पहनने वाला एक स्थायी (वैवाहिक) संबंध में जी रहा है और न तो किसी नए संबंध के लिए उपलब्ध है और न ही यौन रोमांच की तलाश में है। विवाह की अँगूठी इससे केवल कुछ हद तक ही बचाती है; बात चिन्ह की है।

जो कोई आज भी स्त्रियों के लिए सिर ढकना अनिवार्य ठहराता है – या स्त्री के रूप में स्वयं अपने लिए अनिवार्य ठहराती है – उसने अभी तक सुसमाचार की उस स्वतंत्रता को नहीं समझा है, जिसके लिए हम बुलाए गए हैं।

आगे 1 कुरिन्थियों 11:3-16 का एक **व्याख्यात्मक, स्वतंत्र रूपांतर (भावानुवाद)** दिया गया है – जैसे मैं इस खंड को संक्षेप में समझाऊँगा।

**मेरे लिए यह महत्वपूर्ण है कि तुम कुरिन्थी इस बात को ध्यान में रखो कि हर पुरुष का उद्गम, अर्थात् उसका सिर, मसीह है, अभिषिक्त जन। उसी के द्वारा वह रचा गया। और पुरुषों के रूप में तुम उससे जुड़े हुए हो, और यह सभा में देखा जा सकता है।**

**स्त्री का सिर पुरुष है। उसकी पसली से वह रची गई, ताकि उसके साथ एक हो जाए। वह सिर, वह देह। पुरुष उसका उद्गम है और वह भी उससे जुड़ी हुई है, जो सभा में दिखाई देता है।**

**यही संबंध हम मसीह में भी देखते हैं। उसका सिर परमेश्वर है। उसने उसे उत्पन्न किया, अपने पुत्र को, जो उसके बराबर है।**

**यदि कुरिन्थुस में कोई पुरुष सभा में ऊँचे स्वर से मसीह या परमेश्वर से प्रार्थना करता है या भविष्यद्वाणी करता है और उस समय उसका सिर ढका हुआ है, तो यह लज्जा की बात है। वह मसीह को नहीं, अपने आप को सम्मान देता है। क्योंकि मूर्तिपूजक मूर्तियों**

**को बलि चढ़ाते समय अपना सिर ढकते हैं। खुले सिर से पुरुष नम्रता दिखाता है और परमप्रधान को, अदृश्य मसीह को, सम्मान देता है।**

**स्त्रियों के साथ ठीक इसका उलटा है। जो स्त्रियाँ सभा में प्रार्थना करती हैं और भविष्यद्वाणी करती हैं और सिर नहीं ढकतीं, वे अपने सिर पर लज्जा लाती हैं। वे अपना और अपने पति का, अर्थात् अपने सिर का, अपमान करती हैं। क्योंकि वे ध्यान अपनी ओर खींचती हैं।**

**यदि कोई यह माँग करता है कि स्त्रियों को भी पुरुषों की तरह सिर ढकने की आवश्यकता नहीं, तो वह इस बात को अंत तक नहीं सोचता। क्योंकि तुम तो जानते हो कि कुरिन्थुस में बिना ओढ़नी की स्त्री मुँड़ी हुई मानी जाती है और उस स्त्री के समान है जो वेश्यावृत्ति करती है या यौन मेल-मिलाप की तलाश में है। यदि वह घूँघट नहीं करती या सिर नहीं ढकती, तो तर्क के अनुसार उसे अपने बाल भी कटवा लेने चाहिए या पूरी तरह मुँड़वा लेने चाहिए।**

**मैं जानता हूँ, तुम्हारा उद्देश्य यह तो नहीं है! पर जिस समाज में तुम रहते हो, उसमें यही परिणाम होता! इसलिए उन लोगों के लिए ठोकर बनने का जोखिम न उठाओ जो**

तुम्हारे पास आते हैं और देखते हैं कि सार्वजनिक रूप से स्त्रियों के सिर ढकने की प्रचलित रीति को कैसे ठुकराया जा रहा है।

पुरुष सभा में, परमेश्वर की उपस्थिति में, अपने आप को न ढकें। क्योंकि पुरुष परमेश्वर का स्वरूप और उसकी महिमा की प्रतिच्छवि है।

स्त्री भी परमेश्वर का स्वरूप है, पर इसके अतिरिक्त वह पुरुष की महिमा की प्रतिच्छवि भी है। उसकी सुंदरता उसके पति की सुंदरता है, जिसके साथ वह एक है।

वह उसकी महिमा कैसे बन सकी? निश्चय ही इसलिए नहीं कि वह उसमें से रचा गया, बल्कि इसलिए कि वह उसमें से, उसकी पसली से, बनाई गई।

और वह पुरुष की महिमा इसलिए नहीं है कि वह उसके लिए रचा गया, बल्कि इसके उलट। वह उसके लिए रची गई, क्योंकि वह अकेला था और उसे सहायता की आवश्यकता थी। और स्त्री के रूप में वह उसके लिए मनभावनी सुंदर थी।

क्योंकि स्त्री का इतना बड़ा मूल्य है और वह पुरुष के लिए इतनी बड़ी उपयोगी है, इसलिए वह स्वयं अपने सिर के बारे में निर्णय करे: कि वह उसे ढके या नहीं। कोई भी उस पर यह थोप नहीं सकता। न उसका पति और न कलीसिया के अगुवे उसे यह आदेश दे सकते हैं कि वह सिर न ढके।

पर स्त्री अपनी स्वतंत्रता और निर्णय की आज़ादी में यह ध्यान रखे कि वह पुरुष से अलग या स्वतंत्र नहीं है। कलीसिया में वह पुरुष के बिना अस्तित्व में नहीं है और पुरुष भी स्त्री के बिना अस्तित्व में नहीं है। परमेश्वर का विचार हमेशा पुरुष और स्त्री का साथ-साथ और एक साथ रहना था। सिर और देह की एकता में वे एक साथ कार्य करते हैं, एकमत होकर, आपस में सलाह करके, शांति से, एक-दूसरे के अधीन रहकर, एक-दूसरे को पूरा करते हुए।

इसका क्या अर्थ है कि एक दूसरे के बिना अस्तित्व में नहीं है? एक बार फिर मनुष्य-जोड़े की सृष्टि को याद करो। आरंभ में स्त्री पुरुष में से आई। उसकी पसली से। उससे जुड़ी हुई, ताकि फिर से उसके साथ एक तन हो। पर आगे सोचो: तब से हर पुरुष एक स्त्री से आता है। पुरुष के बिना कोई स्त्री न होती और स्त्री के बिना कोई पुरुष न

**होता। दोनों समान गरिमा वाले, समान मूल्य वाले और बराबर हैं, अपनी भिन्नता में एक-दूसरे के सिद्ध पूरक। यह सब परमेश्वर का विचार था। वही सिर है, जिससे यह सब निकला है।**

**इसे देखते हुए मैं तुमसे पूछता हूँ: क्या यह शालीन है कि कोई स्त्री सार्वजनिक रूप से, पर बिना घूँघट और बिना ओढ़नी के, परमेश्वर से प्रार्थना करे? नहीं, तुम सहमत होगे कि कुरिन्थुस और रोमी साम्राज्य की रीतियों को देखते हुए यह शालीन नहीं है।**

**ऐसी रीतियाँ और प्रथाएँ होती हैं जो लोगों के लिए प्रकृति के नियमों की तरह होती हैं। यदि कोई पुरुष रीतियों और प्रथाओं से अलग लंबे बाल रखता है, तो इसे लज्जा की बात माना जाता है। यहाँ भी स्त्रियों के साथ ठीक इसका उलटा है। स्त्रियों के लंबे बाल उनकी महिमा हैं, उनका स्वाभाविक शृंगार, जिसे ऐसा ही अनुभव भी किया जाता है। लंबे बाल उसे एक सजाने वाली ओढ़नी या चादर की तरह दिए गए हैं, ताकि वह पुरुष की महिमा हो।**

**यह शृंगार, जो पुरुषों को इतना मनभावना लगता है, उसे वह सभा में ढके। यह इस महिमा के साथ सामने आने की जगह नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे पुरुष को खुले सिर के द्वारा अपनी नम्रता दिखानी चाहिए। क्योंकि बात परमेश्वर और मसीह के सम्मान और महिमा की है। वही है जो हमें राजाओं के राजा के दरबार में आमंत्रित करता है।**

**यदि कुरिन्थुस में कोई इस पर बहस करना चाहता है और सिर ढकने की इस रीति पर प्रश्न उठाता है, तो उसे स्वयं यह ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा कहीं नहीं होता: कि स्त्रियाँ बिना सिर ढके प्रार्थना करें, जैसा तुम स्त्रियों पर थोपना चाहते हो और अपने लिए करते हो। कोई भी कलीसिया ऐसा नहीं करती, इसलिए सिर ढकने के विषय में जो सामान्य रूप से लागू है और आदरणीय है और किसी को ठोकर नहीं खिलाता, उसी पर बने रहो।**

## समापन और सारांश

"खंड की भाषा और पौलुस का निष्कर्ष यह संकेत देते हैं कि कोई कुरिन्थुस की घरेलू कलीसियाओं में घूँघट को या तो सीमित करना या उस पर रोक लगाना चाहता था, पर सब स्त्रियाँ, कुछ स्त्रियाँ या कोई एक स्त्री घूँघट करना चाहती थी। पहले पौलुस सृष्टि के वृत्तांत का संक्षिप्त सार देता है और समझाता है कि पुरुष में से और पुरुष के लिए स्त्री की रचना ही वह कारण है जिससे स्त्री पुरुष की महिमा है। पुरुष उसका सिर है, क्योंकि वह उसमें से रची

गई, और इसलिए उसका सिर उसकी महिमा को प्रतिबिंबित करता है या किसी न किसी रूप में उसे व्यक्त करता है। उत्पत्ति की पुस्तक के वृत्तांत में वह उसकी महिमा भी थी, क्योंकि वह विशेष रूप से उसे आकर्षित करने के लिए रची गई थी, सब पशुओं के विपरीत (उत्पत्ति 2:18-23)।"[72]

"पौलुस के लेखों में लिंगों (जेंडर) का एक धर्मविज्ञान है, **जो इस बात में साकार होता है कि पौलुस सृष्टि के वृत्तांत को यूनानी-रोमी संस्कृति की अवधारणाओं और प्रतीकों और यूनानी भाषा के मुहावरों से कैसे समझाता है।** 'सिर' के रूपक को आदम पर लागू करके पौलुस संकेत देता है कि हव्वा की, आदम के बाद की बाकी मानवजाति की तरह, कई पहचानें हैं। स्त्रियाँ परमेश्वर का स्वरूप हैं, आदम का स्वरूप हैं और 'पुरुष की महिमा' भी हैं। **पौलुस का स्त्री को 'पुरुष की महिमा' कहना किसी अधीनता या कम महिमा की ओर संकेत नहीं करता, बल्कि एक अतिरिक्त महिमा की ओर संकेत करता है: पुरुषों पर उसकी सुंदरता की शक्ति।** उसी प्रकार हम पुरुष की प्रधानता को 1 तीमुथियुस 2:13-14 के पौलुस के संक्षिप्त वर्णन में भी नहीं डाल सकते, जिसमें कहा गया है कि आदम पहले रचा गया (पद 13)। बल्कि पौलुस सृष्टि के वृत्तांत से पारस्परिकता सिखाता है, क्योंकि पौलुस पुरुष को लाभ पाने वाले के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसे स्त्री की सहायता की आवश्यकता है। वह इसे ऐसी अवधारणाओं में बताता है जिन्हें संस्कृति समझ सकती थी। **स्त्री पुरुष में से रची गई, इसलिए सृष्टि के वृत्तांत में पुरुष यूनानी भाषा-प्रयोग में स्त्री के सिर (उसके जीवन के उद्गम) के रूप में कार्य करता है;** पर बाद में हर पुरुष स्त्री से आता है, इसलिए स्त्री भी जीवन का उद्गम है, जो उत्पत्ति 3:20 में 'हव्वा' नाम का अर्थ है।

"इसलिए परमेश्वर की योजना के अनुसार स्त्री और पुरुष एक-दूसरे से स्वतंत्र नहीं हैं। पौलुस की इस प्रकार व्याख्या करने का कोई बाध्यकारी कारण नहीं है कि वह उत्पत्ति 1:27-28 के सृष्टि-वृत्तांत में, या 'सिर' के यूनानी मुहावरे के अपने प्रयोग में, स्त्री के अधिकार का खंडन करता है, उसकी नई व्याख्या करता है या उसे सापेक्ष बना देता है। पुरुष और स्त्री दोनों परमेश्वर के स्वरूप में रचे गए, और दोनों प्रभुता करने के लिए रचे गए, जिसका प्रयोग पौलुस के अनुसार उपयुक्त सांस्कृतिक सीमाओं के भीतर साझेदारी और पारस्परिकता के भाव से किया जाता है।"[73]

**यह अद्भुत है कि सुसमाचार को हर संस्कृति में परमेश्वर की महिमा के लिए और बिना ठोकर के कैसे जिया जा सकता है। परमेश्वर, सबसे बड़ा मिशनरी, सबके लिए धनी है: सुसमाचार सब जातियों के लिए है।**

## परिशिष्ट

नीचे दी गई दोनों पाठ-व्यवस्थाओं का संबंध एक काइएज़्म (Chiasmus; शब्दों या विचारों की क्रॉस-आकार, तिरछी व्यवस्था) से है। पहली व्यवस्था Schnabel की है। वह दिखाती है: यह वचन-भाग पुरुषों से उतना ही बात करता है जितना स्त्रियों से। जो कोई संबोधन की आवृत्ति से यह पढ़ना चाहता है कि कुरिन्थुस में समस्या किसने खड़ी की, वह इससे आगे **नहीं** बढ़ पाता।

पद 4 हर पुरुष ... अपने सिर का अपमान करता है

पद 5 हर स्त्री ... अपने सिर का अपमान करती है

पद 7क पुरुष परमेश्वर की प्रतिच्छवि है

पद 7ख स्त्री पुरुष की प्रतिच्छवि है

पद 11क प्रभु में स्त्री पुरुष के बिना कुछ नहीं

पद 11ख प्रभु में पुरुष स्त्री के बिना कुछ नहीं

पद 12क स्त्री पुरुष से है

पद 12ख पुरुष स्त्री के द्वारा है

पद 14 यह पुरुष के लिए लज्जा की बात है

पद 15 यह स्त्री के लिए आदर की बात है[74]

यहाँ इस वचन-भाग का, अर्थात् इस जुड़े हुए विचार-क्रम या अर्थ-खंड का, एक पूर्णतः शुद्ध काइएज़्म प्रस्तुत किया गया है, जैसा David E. Garland (डेविड ई. गारलैंड) इसे विभाजित करते हैं। यह देखना रोचक है कि एक ही अक्षर A B C D आमने-सामने खड़े हैं, एक बार केंद्रीय कथन से पहले और एक बार उसके बाद, **पद 10 में, जिसे वे स्त्री के सिर ढकने के मूल कथन के रूप में उभारते हैं। मेरे लिए इसका अर्थ है: स्त्री निर्णय करती है कि वह सिर ढके या नहीं। यह निर्णय पुरुष या पति नहीं करते। वह स्वतंत्र है।**

A Introduction: the "Head" of Men and Women (vv.2-3)
Commendation (v.2); Summary of Headship (v.3)
B Shame for Men and Women (vv.4-5)
For Men (v.4); For Women (v.5)
C Social and Theological Reasons for Shame (vv.6-7)
Social Reasons (v.6); Theological Reasons (v.7)
D Creation of Men and Women (vv.8-9)
Men (vv.8a; 9a); Women (vv.8b; 9b)
**E Reason for Women to be Covered (v.10)**
D' Equality of Women and Men (vv.11-12)
Women (vv.11a; 12a); Men (vv.11b; 12b);
Equality in God (v.12c)
C' Social Implications for Women (v.13)
B' Shame and Glory in Men and Women (vv.14-15)
Shame for Men (v.14); Glory for Women (v.15)
A' Conclusion: Exhortation to Adhere to Teachings (v.16)

## टिप्पणियाँ

1. Hans-Jörg Ronsdorf, hj-ronsdorf@t-online.de, आपकी प्रतिक्रिया का स्वागत है। 24.1.2021, अक्टूबर 2026 में संशोधित
2. www.hans-joerg-ronsdorf.de
3. https://theoblog.de/eckhard-schnabel/16636/
4. Cynthia Long Westfall, Paul and Gender. Reclaiming the Apostle's Vision for Men and Women in Christ, Grand Rapids: Baker Academic 2016.
5. Schottroff, L., Der erste Brief an die Gemeinde in Korinth, edd. E. W. Stegemann/L. Schottroff/A. Strotmann/K. Wengst, VII, Theologischer Kommentar zum Neuen Testament, Verlag W. Kohlhammer, Stuttgart 2013, 197.
6. Westfall, Paul and Gender, पृ. 13 (आगे केवल पृष्ठ-संख्या के साथ)।
7. पृ. 13
8. पृ. 17

9. पृ. 20
10. पृ. 25
11. पृ. 26
12. Eckhard J. Schnabel, Der erste Brief des Paulus an die Korinther, Historisch-Theologische Auslegung, Witten/Gießen: SCM R. Brockhaus/Brunnen, चौथा संस्करण 2018, पृ. 625.
13. पृ. 26
14. पृ. 27
15. पृ. 29
16. मात्रोना (Matrona) रोमी साम्राज्य के समाज में उस स्त्री को कहा जाता था जो किसी रोमी नागरिक से विवाहित हो। उसका स्थान अधिकतर घर में था, परिवार और गृहस्थी की देखभाल में। वह घर के स्वामी, अर्थात् पिता या पति, के संरक्षण और अभिभावकत्व में रहती थी। (स्रोत: Wikipedia, लेख "Matrona")
17. पृ. 29
18. पृ. 31
19. पृ. 32
20. पृ. 33
21. पृ. 37
22. Schnabel, E. J., Der erste Brief des Paulus an die Korinther, edd. G. Maier/H.-W. Neudorfer/R. Riesner/E. J. Schnabel, Historisch-Theologische Auslegung Neues Testament, SCM R. Brockhaus; Brunnen Verlag, Witten/Gießen, चौथा संस्करण 2018, 602–603.
23. पृ. 42
24. पृ. 44
25. पौलुस का मूल कथन वही रहता है, भले ही कुछ स्त्रियाँ स्वयं ही ओढ़नी छोड़ना चाहती रही हों। पर यह धारणा कम संभावित है।
26. जब तक अन्यथा न बताया जाए, Elberfelder अनुवाद (जर्मन बाइबल अनुवाद), Edition CSV।
27. ये विचार मेरी पुस्तक "स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!" ("Frauen, vergebt uns!") के अध्याय 6.2 के पूरक हैं। मैं यहाँ अधिकांश बातें नहीं दोहरा रहा हूँ और दोनों अध्ययनों को पढ़ने की सलाह देता हूँ।
28. पृ. 87
29. पृ. 38
30. पृ. 84
31. पृ. 80
32. पृ. 82
33. पृ. 85
34. पृ. 89
35. पृ. 90
36. Schnabel, E. J., 601
37. Schnabel, E. J., 602
38. पृ. 40
39. Schnabel, E. J., 602
40. पृ. 29
41. Schnabel, E. J., 604
42. Schnabel, E. J., 605
43. Schnabel, E. J., 606
44. Schnabel, E. J., 606
45. पृ. 72
46. पृ. 65
47. Schnabel, E. J., Der erste Brief des Paulus an die Korinther, edd. G. Maier - H.-W. Neudorfer - R. Riesner - E. J. Schnabel, Historisch-Theologische Auslegung Neues Testament, SCM R. Brockhaus; Brunnen Verlag, Witten; Gießen 2018, चौथा संस्करण, 608–609.
48. पृ. 70

49. पृ. 62
50. Schnabel, E. J., 609
51. Schnabel, E. J., 609–610
52. पृ. 103
53. Schnabel, E. J., 610
54. Schnabel, E. J., 610–611
55. पृ. 73
56. Schnabel, E. J., 611
57. Schnabel, E. J., 613–614
58. पृ. 30
59. Schnabel, E. J., 616
60. Schnabel, E. J., 616–617
61. Schnabel, E. J., 617
62. पृ. 70
63. Schnabel, E. J., 617–618
64. Schnabel, E. J., 619
65. Schnabel, E. J., 619
66. पृ. 40
67. पृ. 41
68. पृ. 41
69. पृ. 42
70. Schnabel, E. J., Der erste Brief des Paulus an die Korinther, edd. G. Maier - H.-W. Neudorfer - R. Riesner - E. J. Schnabel, Historisch-Theologische Auslegung Neues Testament, SCM R. Brockhaus; Brunnen Verlag, Witten; Gießen चौथा संस्करण 2018, 622–623.
71. Schnabel, E. J., 624
72. पृ. 98
73. पृ. 105
74. Schnabel, E. J., 590